विषय-सूची

प्रकाशकीय

साहित्य-संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर पिछले २५ वर्षों से उदयपुर और राजस्थान में साहित्यिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, एवं कला विषयक सामग्री की शोध-खोज, संग्रह, संपादन और प्रकाशन का काम करता आ रहा है। विशेषकर साहित्य-संस्थान ने राजस्थान में यत्र तत्र बिखरे हुए प्राचीन साहित्य, लोक साहित्य, इतिहास-पुरातत्व और कलात्मक वस्तुओं को प्राप्त करने के लिये निरन्तर प्रयत्न किया है। परिणाम स्वरूप लगभग ३० महत्वपूर्ण और उपयोगी ग्रन्थों का प्रकाशन हो चुका है। साहित्य संस्थान के अन्तर्गत इस समय (१) प्राचीन-साहित्य विभाग (२) लोक-साहित्य विभाग (३) इतिहास पुरातत्व विभाग (४) अध्ययन गृह और संग्रहालय विभाग (५) राजस्थानी-प्राचीन-साहित्य विभाग (६) पृथ्वीराज-रासो संपादन विभाग (७) भील-साहित्य संग्रह विभाग (८) नव साहित्य सृजन कार्य एवं (९) सामान्य विभाग विकसित हो रहे हैं। सामान्य विभाग के अन्तर्गत बून्दी के प्रसिद्ध राजस्थानी कवि श्री सूर्यमल की स्मृति में 'महाकवि सूर्यमल्ल आसन' और प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता महामहोपाध्याय डा० गौरीशंकरजीकी यादगार में 'ओझा आसन' स्थापित किया है। संस्थान की मुख-पत्रिका के रूपमें त्रैमासिक 'शोध पत्रिका' का प्रकाशन किया जाता है एवं नवीन उदीयमान लेखकों को लिखनेके लिये प्रोत्साहित करने की दृष्टि से उनकी रचनाओं का प्रकाशन कार्य चालू किया गया है। इस प्रकार साहित्य-संस्थान राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर अपने सीमित और स्वल्प साधनों से राजस्थानी-साहित्य, संस्कृति और इतिहास के क्षेत्र में विभिन्न विघ्न-बाधाओं के बावजूद भी निरन्तर प्रगति और कार्य कर रहा है। राजस्थान की गौरव गरिमा की महिमामय झांकी अतीत के पृष्ठों में अंकित है- आवश्यकता है; उसके सुनहले पृष्ठोंको खोलने की। साहित्य संस्थान नम्रता के साथ इसी ओर अग्रसर है।

प्रस्तुत पुस्तक साहित्य-संस्थान के संग्रह से तय्यार की गई है। साहित्य संस्थान के संग्राहकों ने अनेक स्थानों से ढूंढ-ढांढ कर १६,००० के लगभग छन्दों का संग्रह किया है। इस संग्रह में दोहे, सोरठे, कवित्त और गीत आदि कई प्रकार के छन्द सुरक्षित हैं। इन छन्दों में विभिन्न ऐतिहासिक और सामाजिक घटनाओं व्यक्तियों आदि का वर्णन मिलता है। ये विभिन्न प्रकार के

गीत और छन्द लाखों की संख्या में राजस्थान के नगरों, कस्बों एवं गांवों में बिखरे हुए हैं। इनके प्रकाशन से एक ओर साहित्यकारों को राजस्थानी साहित्य का परिचय मिल सकेगा तो दूसरी ओर इतिहास सम्बन्धी घटनाओं पर भी प्रकाश पड़ेगा। इस प्रकार साहित्य-संस्थान, राजस्थान में अकेली संस्था है, जो शोध-खोज के क्षेत्र में नियमित काम कर रही है।

इस प्रकार के संग्रह अब तक कई निकाले जा सकते थे लेकिन साधन सुविधाओं के अभाव में साहित्य संस्थान विवश था। इस वर्ष प्राचीन राजस्थानी साहित्य और लोक साहित्य के प्रकाशन कार्य के लिये भारत सरकार के शिक्षा-विकास सचिवालय ने साहित्य-संस्थान को कृपा कर (५७,०००) सत्तावन हजार रुपये की सहायता प्रदान की है, उसी से उक्त पुस्तक का प्रकाशन-कार्य सम्पन्न हो सका है।

इस सहायता को दिलाने में राजस्थान सरकार के मुख्य मन्त्री (जो शिक्षा मन्त्री भी हैं) माननीय श्री मोहनलाल सुखाड़िया और उनके शिक्षा सचिवालय के अधिकारियों का पूरा योग रहा है। इसके लिए मैं, उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूं। साथ ही भारत-सरकार के उप-शिक्षा सलाहकार डॉ० पी० डी० शुक्ला, डॉ. भान तथा श्री सोहनसिंह एम. ए. (लंदन) को भी अत्यन्त आभारी हूँ, जिन्होंने सहायता की रकम शीघ्र और समय पर दिलवाई। सच तो यह है कि उक्त महानुभावों की प्रेरणा और सहायता से ही यह रकम मिल सकी है और संस्थान अपने ग्रन्थों का प्रकाशन करवा सका है। भारत सरकार के राज्य शिक्षा मन्त्री डॉ० कालूलालजी श्रीमाली के प्रति क्या कृतज्ञता प्रकट की जाय; यह तो उन्हीं का अपना काम है। उनके सुझाव और उनकी प्रेरणा से संस्था के काम में निरन्तर विकास और विस्तार हुआ है और आगे भी होता रहेगा। इसी आशा और विश्वास में, उनका आभार मानता हूं। अन्य उन सभी का आभारी हूं; जिन्होंने इस काम में सहायता दी है।

विनीत—
गिरिधारीलाल शर्मा
अध्यक्ष
साहित्य-संस्थान

दीपमालिका
२०१४, सन् १९५७

संस्था की ओर से

◎ ◎

राजस्थान विश्व विद्यापीठ, उदयपुर के अन्तर्गत आज से १६ वर्ष पूर्व प्राचीन साहित्य की शोध-खोज, संग्रह संपादन और प्रकाशन-कार्य के लिये "प्राचीन साहित्य-खोज विभाग" की स्थापना की गई थी। तब से आज तक इसके नाम में, कार्य प्रवृत्तियों के विकास और विस्तार के साथ परिवर्तन और परिवर्धन होते रहे हैं। इस समय इसे साहित्य संस्थान के नाम से अभिहित किया जाता है। प्राचीन साहित्य की खोज-शोध के अलावा आज इसमें लोक-साहित्य, इतिहास, पुरातत्त्व एवं कला विषयक सामग्री का संग्रह, सम्पादन और प्रकाशन किया जाता है। नवीन साहित्य के सृजन एवं विकास के लिये क्षेत्र और वातावरण पैदा करने का प्रयत्न किया जाता है। प्रतिभाशाली और उदयीमान लेखकों की रचनाओं के प्रकाशन की समुचित व्यवस्था करने के लिये साधन सुविधाएं एकत्रित की जाती हैं उनके लिये अवसर उत्पन्न करने का प्रयत्न किया जाता है। साहित्य-संस्थान में विगत डेढ़ युग से भारतीय साहित्य, उसकी संस्कृति और विविध कलात्मक सामग्री के पुनर्शोधन के लिये कार्य किया जाता रहा है। संस्थान की ओर से अब तक कई महत्वपूर्ण प्रकाशन किये जा चुके हैं। प्रस्तुत पुस्तक उन्हीं में से एक है।

बत्तीस वर्षों के अथक परिश्रम और व्यवसाय के परिणाम स्वरूप ही आज प्राचीन राजस्थानी साहित्य के प्रकाशन का कार्य साहित्य-संस्थान, राजस्थान विश्व विद्यापीठ के द्वारा किया जा रहा है। विगत वर्षों के कार्य-काल में साहित्य संस्थान के द्वारा हजारों की संख्या में प्राचीन राजस्थानी गीत (डिंगल), लोक गीत, लोक वार्ताएँ, लोक कहावतें, ख्यातें और मुहावरें आदि एकत्रित किये जा चुके हैं। लोक कहावतों और लोकगीतों की अब तक काफी पुस्तकें संस्थान की ओर से प्रकाशित की जा चुकी हैं।

राजस्थान में प्राचीन राजस्थानी और हिन्दी-साहित्य का अटूट भण्डार है। इसका अन्वेषण और सम्पादन किया जाय तो राजस्थानी जीवन के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक एव ऐतिहासिक आदि विभिन्न अंगों पर पर्याप्त प्रकाश पड़ सकता है। साहित्य के इतिहास में राजस्थानी प्रतिभाओं का कितना महत्वपूर्ण योग रहा है; इसका समुचित और सही परिचय आज तक विद्वानों और लेखकों को नहीं प्राप्त हो सकता है। राजस्थान विश्व विद्यापीठ; उदयपुर का निरन्तर यह प्रयास रहा है कि राजस्थान की ऐसी अन्धकाराच्छन्न प्रतिभाओं को प्रकाश में लाया जाय और उनके साहित्य की रस-धारा से जन जीवन को परिचित करवाया जाय।

उपयुक्त कार्य कितना मुश्किल और व्यय साध्य है; यह किसी से छिपा हुआ नहीं है। साहित्य-संस्थान की ओर से अत्यल्प साधनों के होते हुए भी, जितना कार्य किया गया, वह विद्वानों के देखने और सोचनेकी बात है।

इस वर्ष राजस्थान सरकार की सिफारिश से भारत-सरकार के शिक्षा विकास सचिवालय के द्वारा ५१,०००) की प्रकाशन सहायता स्वीकार की गई है; इसके लिये मैं राजस्थान सरकार के शिक्षा-सचिवालय, उसके विभाग एवं भारत सरकार के शिक्षा-विकास-अधिकारियों और सलाहकारों का आभारी हूँ। विशेष कर डॉ० कालूलालजी श्रीमाली राज्य शिक्षामन्त्री भारत-सरकार, डॉ० पी. डी. शुक्ला, सलाहकार शिक्षा-विकास-सचिवालय एवं डॉ० सोहनसिंहजी आदि के प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हूं; जिन्होंने साहित्य-संस्थान के विकास के लिये कृपा कर सहायता स्वीकृत कराई है।

आशा है; भविष्य में भी सभी का सहयोग निरन्तर मिलता रहेगा।

विनीतः—

जनार्दनराय नागर

प्रोफ-कुलपति

राजस्थान विश्व-विद्यापीठ, उदयपुर

दीप-मालिका

वि. सं. २०१४

★★
★

—:सम्पादकीयः—

राजस्थान में कहावत है कि नाम बना रहने के साधन "गीतड़ा के भीतड़ा।" अर्थात् कवियों द्वारा रचित पद्य अथवा दुर्गादि स्थानों का निर्माण हैं। परिणाम स्वरूप राजस्थान के राजवंशजों ने कवियों को आश्रय देकर तथा महत्त्वपूर्ण दुर्ग आदि स्थान बनवा कर अपने नाम को अमर बनाया है। यह भी स्पष्ट है कि ,'अखर परख्खे मुरधरा" राजस्थानी कवियों का सम्मान अधिकतर राठौड़ वीरों ने ही किया है। इसलिये अब तक के साहित्य संस्थान राज० वि० विद्यापीठ द्वारा संग्रहित साहित्य विशेषतः राठौड़ों सम्बन्धी साहित्य की ही उपलब्धि हुई है। एक बात और भी है, शिशोदिया वीर धर्म के लिये दृढ़ प्रतिज्ञ, कछवाहे वीर विद्या-शील और राठौड़ वीर तलवार चलाने में दक्ष माने गये। इसलिये वीर कविता में राठौड़ों का अधिक संग्रह होना चाहिये। वीर होने के कारण ही इन्हें कमधज (कबन्ध रूप में "मस्तक रहित" लड़ने वाले) कहागया है।

प्रस्तुत गीत-संकलन राठोड़-वंश से सम्बन्धित है। इसमें अधिकतर उनके द्वारा होनेवाले युद्धों पर ही प्रकाश डाला गया है, जिससे राठोड़ों के वीरोचित उत्साह-परिचय के साथ ही उनके इतिहास पर भी अच्छा प्रकाश पड़ता है।

वैसे तो इन गीतों के ऐतिहासिक शोध-खोज के विषय को लेकर महाग्रंथ तैयार हो सकता है. परन्तु ये इस दृष्टि से अपने आप में पूर्ण हैं। यही कारण है, कि हम इस विषय का अछूता रख साहित्य – सौन्दर्य के प्रकाशन में ही अधिक यत्न शील रहे।

प्रसंग से यह भी कहना पड़ता है कि संस्थान के संग्रह कर्त्ताओं में श्री साँवलदानजी आशिया द्वारा ही अधिक संग्रह हुआ है जो राजस्थानी साहित्य के जानकार हैं, अतः इनका यह परिश्रम सराहनीय है।

—कविराज मोहनसिंह

प्राचीन राजस्थानी गीत

भाग—७

महाराजा अभयसिंह (जोधपुर)

[१] गीत

वाते भांफते हजारां हाथ भालरूला कढी तेग,
हाथ दूजे साहिया परीती ढाल हूँस ।
मेलो गैलो मेलो वाज आखवो वजाई मालो,
रवद्दां ऊपरे राजा आयो असी रूंस ॥१॥
कुंडला अनेका तूजी अनेका अभागा कुंत,
वरां पूरां खवै धरां अनेका वाणास ।
अनेका बंदूका वाजा झुराड़ा दमंगा ऊडै,
धधआ अनेकां माथे ओरिया ग्रहास ॥२॥
त्रागी भाट अराबां पँखाला सेलां रूकां वाद,
अजा तणै अभै थाद मेलिया अचूक ।
भागा भागा भागा भाग भाग मेछ कहे भूरो,
भूरा तणे धके वागा जके हुआ भूक ॥३॥
घोड़े घाड़े काढियो बिलंदखां नू चाढ (धके),
धूरसाह दूजे सीम कीधी सांदू संघ ।
दली री उथाप थाप धारणे अगंजी हींदू,
बाप बाप प्रतपो अनंमी बामी बंध ॥४॥

(रचयिता:— अज्ञात)

अर्थः— हजारों रुपयों के कीमती कूदते हुए घोड़े बढ़ाये जाने लगे सुलगते हुए पूले की तरह ज्वाला उगलती हुई तलवारें निकाली जाने लगी। इस प्रकार दूसरा ही मालदेव (के तुल्य अभयसिंह), "घोड़ों को बढ़ाओ २" आवाज देता हुआ यवनों पर चढ़ आया।

धनुष ऊंचे जाकर कुंडलाकृति होने लगे, असंख्य विधारे भाले दिखाई देने लगे, वीरों की तलवारें शत्रु-शरीरों को काट कर आरपार होने लगी। बन्दूक दागी जाने लगी जिनसे चिनगारियां उड़ने लगी। इस प्रकार (राठौड़ वीर अभयसिंह ने) योद्धाओं पर विचित्र रीति से घोड़े बढ़ाये।

अरबी घोड़े इस प्रकार झपटने लगे, मानों वे पंख वाले बन गये हों, भालों से और तलवारों से मारकाट होने लगी। इस प्रकार अजीतसिंह के पुत्र अभयसिंह ने अडिग वीर समूह को शत्रुओं से भिड़ा दिया, जिससे यवन "भागो ! भागो !!"— कहते हुए भागने लगे और (इसी बीच) जिसने न भाग कर युवक राजा का सामना किया वह टुकड़े २ होकर गिरा।

पोषण कर्त्ता दूसरे ही शूरसिंह (के तुल्य अभयसिंह) ने ललकारते हुए सर बुलंदखां को (रण से) भगा दिया और सातों समुद्रों तक अपनी सीमा स्थापित की। (वास्तव में) यह हिंदू वीर, दिल्ली-तख्त को बना सकता है एवं उजाड़ भी सकता है। यह किसी से दबने वाला नहीं है। कवि इसे आशीर्वाद देते हुए अंत में कहता है, कि हे बांई ओर पगड़ी बांधने वाले स्वाभिमानी वीर (अभयसिंह)! तू युगों तक शासन करता रह!

अमरसिंह राठौड़

[२] गीत

प्रबळ जास साहस मनस नवां कोटां प्रगट,
बिजड़ बळि तुंग असमांण तोलै।
आप बळि तपै जग जेठ जग ऊपरां,
अमर दिनकर रहै केण ओलै

ऊभियै आच अणभंग छिवतौ अरसि,
प्रिथीपति खाग दीलेस पूजौ
वादलां दलां गजबंध रौ वीर वर,
दुई किम सहस करमाळ दूजौ ॥२॥

घाट घाडिम जियै जगत माथे घहै,
वारियै छात्र धरिये खत्री घोड़ ।
गिरवरां नरां आदीत गांगां हरौ,
रहे काही परा केम राठौड़ ॥३॥

हैंवि ऊजास ससत्र नखत्र झांखा पड़े,
नवसहस धणी रिणमाल हरि नूर ।
त्रिजड़ किरणा कियां साख तेरह तिलक,
इरहर झलहलै तेरमौ सूर ॥४॥

(रचयिताः— नरहरदास बारहठ)

अर्थः— जिसका पराक्रम, साहस एवं मस्ती समूचे मारवाड़ में प्रकट है, और जो अपनी तलवार के बल से आसमान को ऊँचा उठा लेता है (उथल पुथल मचा देता है) एवं जागरूक होकर अपने बल से जेठ मास के सूर्य की तरह (सारे) संसार पर तपता रहता (राज्य करता रहता) है, वह अमरसिंह किस की ओट में छिप सकता है ।

जो अपने उठे हुए हाथों से आसमान को छूता रहता है, जिसके खड्ग की पूजा दिल्लीश्वर (बादशाह) करता है, वह गजसिंह का पुत्र अभंग वीर, दूसरे मालदेव के समान एवं सहस्त्र किरण (सूर्य) की तरह (तेजस्वी) है, शत्रु-सेना रूपी बादलों में किस प्रकार छिप सकता है ?

संसार में गांगा का वंशज (अमरसिंह), अपने पूर्वजों के मार्ग पर चलने

वाला एवं छत्र धारण कर क्षत्रियत्व की ख्याति प्राप्त करने वाला है। (वास्तव में) यह, राठौड़ वीर सूर्य के समान (तेजस्वी) है। यह, पर्वतकाय वीरों की ओट में किस प्रकार छिपा रह सकता है?

रणमल के वंशज (अमरसिंह) को सशस्त्र देखने पर चमकते हुए नक्षत्रों के समान यह भासित होता है। यह वीर, राठौड़ की तेरह शाखाओं का तिलक है। (वास्तव में यह) मरुदेशीय वीर तेरहवें सूर्य के समान है, जो अपनी खड्ग-रूपी किरणें फैलाता हुआ चमकता रहता है।

अमरसिंह राठौड़

[३] गीत

वाधी वीर रस राठौड़ वडाले,
भवस छमा विच भाली।
अरि जितरा वितरां उर ऊगी,
अमर तणी अणियाली ॥१॥

सत्र सांकड़े थडाण सँवाहे,
राव महा रिण रोपी।
देखे साह दुयांने जमदढ,
असुरां घड़ घड़ ओपी ॥२॥

पह इखे जड़तां प्रतमाली,
गजसिँघ उत सूँ गाढी।
मूगल पंजर पंजर मोरां,
कालिज कुंपलि काढी ॥३॥

आलम आगले आठ हजारी,
पासे सही पचासां।

अमर करण फळ मोगळआळी,
खास मरे अँबखासाँ ॥४॥

(रचयिताः— अज्ञात)

अर्थः— वीर राठोड़ अमरसिंह ने, सभास्थल को (बीज का) उपयुक्त क्षेत्र समझ कर उसमें भविष्य रूपी बीज बोदिया। जिससे जितने शत्रु थे, उनके हृदय में वह (बीज) कटार-रूप में अंकुरित हो उठा।

राव (अमर) ने कटार-अंकुर को शत्रु (बादशाह) रूपी कुवके नजदीक ही महारण में लगा दिया। बादशाह ने सभा में दोनों पंक्तियों की ओर जब देखा, तब उसने सब के शरीर में कटार-अंकुर लगा हुआ पाया।

गजसिंह के पुत्र (अमर) ने जब समीपस्थ (सलामतखां) पर कटार का वार किया और जब वह मुगल की पीठ के आर पार निकल गई, तब ऐसी लगी मानों समय पाकर उसके अंकुर की कोंपल ताम्र-वर्ण में निकली हो।

बादशाह के पास सभा में आठ हजारी मनसबदार और पचासों सैयद खड़े हुए थे, उनके बीच वह (अंकुरित) कटारी वीर अमर के हाथों फलित होकर अम्बखास में रस पूर्ण होने लगी (शत्रुओं का रक्तपान करने लगी)।

अमरसिंह राठोड़

[४] गीत

अणी धार आचार करती धड़ा ओपवी,
आप लागी छटां तणी जमरा।
वींहरी दूसरी खमे नहँ वताई,
आकरी कटारी छाक अमरा ॥१॥
भरीयण भटी माती कलह ऊकली,
हसी ताती करग हूंत ऊठी।

पियै एराक सुजि थाक फाड़े पड़े,
भाल एराक प्रतमाल जूठी ॥२॥
मजालस जमदढां गजण रा मांडते,
खरा रहिया पगां असत खड़िया
ईखियो पांणगे जिके घूमे अजे,
पांणगो चाखियो जिके पड़िया ॥३॥

लोह छक उछके अमर पड़ियो लड़े,
पाड़िया खान मतिवाळ प्याला ।
फाक गिण नकट बंगाल-पति कांपियो,
भांपियो तखत प्रतमाल भाळा ॥४॥

(रचयिता:— नाथा सांदू)

अर्थ.— हे वीर वर अमरसिंह (राठोड़) तेरी तेज कटारी का वार कौन सह सकता है, (क्योंकि) वह तो तेज मदिरा की घूंट है (जिसे पीने पर बेहोशी छा जाती है) ? और जिस (कटारी) की पैनी अणी शत्रु-काया का भयानक रक्त-पात करती हुई ऐसी लगने लगती है, मानो यमराज के छुरे का प्रहार हो रहा हो ।

(हे अमर !) शत्रुओं रूपी भट्टी में कलह (रूपी आग) से उबलती हुई तेरी इस चंचल हाथों से उठाई गई मदिरा-रूपी कटार को जो कोई लड़ने वाला (भिड़ने वाला) वीर पीलेता है, वह अचेत हो गुड़फड़े जमीन पर पड़ा दिखाई देता है, क्योंकि पीने वाले के अंदर ज्वाला फैलने लगती है ।

हे गजसिंह के पुत्र ! तू जब मदिरा रूपी कटार की मजलिश का आयोजन करता है, तब जो सच्चे वीर होते हैं, वे अपने कदम को मजबूत बनाये रखते हैं और कायर होते हैं, वे वहां से भाग ही जाते हैं । (वैसे) खड़े रहने वालों में से कई तो मदिरा रूपी कटार को केवल देख कर ही झूमने लग जाते हैं और कई इसकी घूंट कर लेते हैं (पीजाते हैं), वे प्राण गँवाकर जमीन पर पड़कर ही रहते हैं ।

हे अमर ! तू (कटारी चलाता हुआ), घायल होकर भी उठ कर लड़ता रहा और मदिरा रूपी कटार की मजलिस (रण) में अनेक यवन-योद्धाओं को समाप्त करता रहा। (वास्तव में) तुझे बादशाह, यमस्वरूप मानकर कंपित हो गया और तेरी कटार की ज्वाला से शाही तख्त सशंक हो उठा।

अमरसिंह राठौड़

[५] गीत

दरगाह विचै पतिसाह देखतां,
कोल रूप प्रगटे कहर।
जोधपुरा मोहणी जडाली,
जण जण प्रत पायो जहर ॥१॥

खान निशाच गहुथक खापे,
गांजी साह तणो ओ गाढ।
देखी जहर दाणवां दीठी,
देवी रूप वहै जमदाढ ॥२॥

दाणवां तणी भेदिया डाढर,
किलवां उर छेदेअ काल।
पांती विहं हलोहल पायो,
भांति करै नहं भोगालियाल ॥३॥

फिरि फिरि अफिर संवार फेरियो,
दाणव राव तणे दरबार।
अमरा कमंध तणी अणीयाली,
आद भगत मोखी अवतार ॥४॥

(रचयिता— जोगीदास कुंवारिया)

राठौड़ इन्द्रसिंह (खेरवा)

[७] गीत

घर वेघ गजसिंह इन्द्र जेम आयौ धके,
झड़ त्रिजड़ पवन आतस झकोले ।
जोड़ रा जिको सिरदार रहिया जरां,
इन्दड़ा मेर- गिर- तणे ओले ॥१॥
औघरड़ धार घड़ छड़ दड़ड़ आवधां,
कड़ड़ खग बीज पड़ जरद कांबे ।
तड़ दहूँ तणा भड़ निवड़ बचिया तरां,
वडा गिर अनड़ राठौड़ वांसे ॥२॥
वार रत चोळ गज बोल दल वाहला,
वेध घर आवधां कहर वूठै ।
अँग अढँग ग्याळ व्रज जेम पद जीविया,
पतावत अभँग अँग दुरँग पूठै ॥३॥
आतसां सोर घणघोर कल ऊकले,
झूँड गिर सैहर रत लगा झरणे ।
संपेखे झाट भड़ थाट आया सको,
सुरां गिर भीम हर तणै सरणे ॥४॥
वादळां ग्रळां सूंडाहलां घिरोले,
जोध खग वाहि सामी जरीदे ।
करग घर अनड़ व्रज सरण राखे किसन,
एम दल राखिया सरण इंदे ॥५॥

(रचयिता:- आढ़ा पहाड़खान

अर्थः—पृथ्वी के लिये जब गजसिंह क्रोध करता हुआ इन्द्र-स्वरूप होकर चढ़ा, तब खड्गाघात ही पवन और उसका (प्रताप) ताप बन गया। (रण में) जो घर-धरी के सामन्त थे, वे सब उस (वीर गजसिंह) से बचने के लिये सुमेरु-सदृश वीर इन्द्रसिंह की ओट में जा छिपे।

(वहां) शस्त्र-वृष्टि ही अपार जल-वर्षा और कवच पर होने वाले खड्गाघात ही कंधे पर कड़कते हुए विद्युत्पात बन गये। उस समय दोनों दल के वीर, उस महान् पर्वतकाय राठौड़ (इन्द्रसिंह) की ओट में होकर ही बच सके।

शस्त्र-प्रहारों से बहाया गया रक्त, हाथियों को डुबो देने वाला नद-प्रवाह बन गया और शस्त्र-वर्षा भयंकर जल-वृष्टि बन गई। उस अद्भुत युद्ध में, जिस प्रकार अति वृष्टि से व्याकुल ग्वाल एवं व्रज (गोवर्द्धन की ओट में) बचे, उसी तरह अन्य वीर, उस सुदृढ़ दुर्ग-स्वरूपी वीर प्रतापसिंह के पुत्र (इन्द्रसिंह) की ओट में बच गये।

बारूद की गर्मी ही ताप और उन्नतकाय वीरों द्वारा बहाया गया रक्त प्रवाह ही गिरि-शिखरों से झरते हुए स्रोत बन गये। ऐसे शस्त्रापातों को देख-कर योद्धागण, भीमसिंह के पौत्र (इन्द्रसिंह) के शरण में गये, जो देवताओं के पहाड़ तुल्य था।

वीर इन्द्रसिंह ने सामना कर खड्गाघात करते हुए, घनघटा-तुल्य विपक्षी सेना के हाथियों को नष्ट कर दिया। उस वीर ने अपने पक्ष की सेना को इस तरह बचाया, जिस तरह कृष्ण ने गोवर्द्धन पर्वत अपनी अंगुली पर उठाकर व्रज को बचाया।

राठौड़ उग्रसेन

[८] गीत

अळ चाढ़ण उगर घरा जोधाणै,
कळ राणा कुळवाट कळ।

रवदां तणां खांभिया रहिया,
दहवारी थांभिया दल ॥१॥

राखण रूप घडां राठोड़ां,
चीतोड़ा दाखण चटक ।
रणमल थाटी बार रोकिया,
किलमां चा घाटी कटक ॥२॥

उदा-हरा वडो प्रब आखां,
पाया हद तो तूठां परम ।
मछि राखी जाडी मेवाड़ा,
मवड़ां पाहाड़ां सरम ॥३॥

सांवलां तणा ऊपरे सारा,
घूमे अवरंग साह घड़ ।
कलि मरण सिंघला कीधी,
उदियापुर वाला अनड़ ॥४॥

(रचि० अज्ञात)

अर्थः—हे रूपसेन ! मरुप्रदेश की कांति बढ़ाने के लिये अपने वंश की मरोड़ (शान) रखकर महाराणा का सहायक बन तूने यवनों के कंधों से कंधे मिलाकर चलने वाले (यवन पक्षीय) वीरों की सेना को देबारी स्थान पर रोक रखा ।

हे रणमल के समान ठाठ बाट रखने वाले (रूपसेन) ! राठौड़ वंश की शोभा एवं चित्तौड़ के स्वामी का तेज बनाये रखने के लिये तूने शाही सेना को देबारी नाके के बाहर ही रोक दिया ।

हे ऊदा के वंशज (अथवा पौत्र)! ईश्वर की कृपा से तूने यह दिन बड़े पर्व के समान पाया है, आज तू महाराणा की इस महान् भूमि और ऊँचे पहाड़ों की प्रतिष्ठा रखने में समर्थ हुआ है।

हे सांवलदास के पुत्र (या वंशज)!, सिंह-तुल्य उदयपुर के स्वामिमानी वीर! जब तुझ पर बादशाह औरंगजेब की सेना घिर आई एवं शस्त्र बरसाने लगी, तब तूने (पीछे कदम नहीं दिया और) युद्ध करते हुए मृत्यु प्राप्त की।

राठौड़ उदयभाण* (द्वितीय) एवं अखैराज

[६] गीत

आवे दिखणादि लाख दल आवो,
माझ न जाणा वडा मड़।
अखई न छोड़े उदान,
ऊदो नहँ छोड़े अनड़ ॥१॥

साँम ध्रणा भारत सेवान,
रजपूतां कढ़िया रजवट।
कमधाँ तणां उजालो कुल वट,
दोनूं भाई लड़े जमदट ॥२॥

कमा हरा पण धणां काम रा,
अदवां सिर भारी अदम।

---

*टिप्पणी:—ये दोनों वीर, क्रमशः 'पांदरवाड़ा' एवं 'भणाय', प्रान्त अजमेर के रहने वाले थे।

भूंडी वार रोपियो माथी (भारथि),
कूंडाणे ऊंडाणे कदम ॥३॥

घोड़े राव घाड खळ घावां,
आंटा नह राखिया उधार ।
घोड़ा हूंत देश गज धाटी,
मारण हार राखिया मार ॥४॥

(रच० अज्ञात)

अर्थः—दक्षिणी सेना लाखों की संख्या में भी क्यों न आवें ? परन्तु ये दोनों वीर (युद्ध से) भागने वाले नहीं हैं । अखयसिंह उदयभानु का एवं उदयभानु, अखयसिंह का साथ कभी छोड़ने वाला नहीं है ।

(भणाय वाले) श्यामसिंह के दोनों वंशज । रणतीर्थ उपासक एवं सच्चे राजपूत कहे जाने वाले हैं । ये दोनों भाई यमदूत के समान, लड़ते हुए राठौड़ वंश को उज्जवल (पवित्र) करने वाले हैं ।

ये कर्मसेन के वंशज, युद्ध के समय बड़े काम के हैं । 'कुंडाण' नामक युद्धस्थल पर अनन्य दक्खिनियों के साथ युद्ध छिड़ जाने पर आपत्ति के समय इन्होंने ही दृढ़ता से पैर जमाये ।

इन अश्वारोही वीरों ने अपने घोड़ों को युद्ध भूमि में बढ़ा, शत्रुओं पर प्रहार करते हुए, मारने वाले गजारोहियों को मारकर पुराना बदला ले लिया ।

राठौड़ उदयभानु

[१०] गीत

मिले खुरासाण मीर धरा ऊछळे दबंग धोम,
हलाबोळ दिली फौजां हालि चढे हीक ।

पाट पति ऊदो जे गंगेव राऊ माल परे,
लाख दलां बधे लोह मेळियो लाखीक ॥१॥
खिवे खाग नागां खरहंड मेछ हींदु खसे,
ढीली छळि ढील वाग मये रण ढांण ।
आव संघां उतरे नराळा जीण साळा श्रंग,
केवियां राठौड़ राव बाहतां केवांण ॥२॥
धूवके निहाव गोळां वाजित्रां श्रयास ध्रिवे
धरा धूजि खुरा रवां तगे नाग धाम ।
नेत बांधे वेहड़ां धड़ां करावै मोर नाच,
स्याम रै अभंग नाथ डोहवै संग्राम ॥३॥
ऊमिये केवाण पांण आगळि अनेकां एकां,
दर्रे धड़ा मूंगळो ववारे वंस वांन ।
कना-ईरी जैत भुजां चाढि नीर नरां कोटां,
जीतवौ सुपंम जीतो देखतो जिहांन ॥४॥

पोखि पलं चरां हुरां बगदान दीध पांणि,
निमैं भीति सौमि चित करे खत्र नीम ।
आजरो बदन हुवै आजरा प्रवाड़ा जोगि,
साजो जम मोगवै भूमकारो नगं सीम ॥५॥

(१४० नरहरदास बारहठ)

अर्थः—जिस समय मुसलमानी (यवन) सीर झपट कर आये और आग्नेयास्त्र दागे जाने लगे. पृथ्वी पर चिनगारियां एवं धूंआ छागया, साथ ही मुन की प्याऊी भयानक शाही सेना आक्रमण करने लगी, तब गांता और

मालदेव से भी विशिष्ट वीर ऊदा (उदयभानु), जो अपने सिंहासन का स्वामी था, ने लाखों सैनिकों की संख्या वाली सेना पर हमला कर लाखों शस्त्रों से अपने शस्त्र मिलाये।

राठौड़ वीर की तलवार के प्रहार जब यवनों पर होने लगे, तब शेषनाग के मस्तक पर आग चमकने लगी। शाही सेना के यवन और हिंदू वीर कुचले जाकर खिसकने लगे, दिल्ली के जो रत्न और घोड़ों की रासें उठाकर बढ़े थे, वे युद्ध में मथे जाने लगे और झण्डेधारी हाथी तथा जीनधारी घोड़े (शस्त्राघातों से) कट २ कर गिरने लगे।

श्यामसिंह का प्रचण्ड वीर पुत्र (या वंशज) । वह जब युद्ध-वारिधि का मंथन करने लगा, तब तोपों से गोले चलने लगे। रणवाद्यों के बजने से आकाश प्रतिध्वनित हो उठा। अश्व-खुरों की ध्वनि से पृथ्वी कांपकर नागलोक में धँसने लगी। सेना पर नेतृत्व करने वाले उस वीर राठौड़ ने विपक्षी सेना को काट कर शत्रु वीरों को मयूर के समान नाचने वाला बना दिया अर्थात् उन्हें घर से वियुक्त कर, मयूर की तरह विरही बनाकर चक्कर काटने वाला कर दिया, (क्योंकि मयूर अपनी मादा के सहयोग के विरह में आंसू बहाते हुए नाचा करता है)।

उठी हुई तलवार के बल से अनेक वीरों का सामना करते हुए अकेले कूंपा के पौत्र (या वंशज) ने मुगल सेना पर काबू कर अपने वंश की टेक (मर्यादा) रखली। साथ ही विजयी भुजाओं से मरुदेश को तेजस्वी बनाकर वह विजेता वीर साक्षात् स्वयंभू के समान दृष्टिगोचर हुआ।

उस वीर ने आमिषभोक्ताओं का पोषण कर हूरों का कन्यादान किया और निर्भय भित्ति पर क्षत्रियत्व का चित्र अंकित कर दिया। इस युद्ध ख्याति से उस वीर का मुख सम्मान के साथ देखा जाने लगा। वीर पुरुषों की सीमा-स्वरूप वह योद्धा, संग्रह किए हुए यश का आनन्द लेने लगा।

राठौड़ उदयभानु

[११] गीत

मँडियै जुध भलक खेति राउ मारू,
खगि खेलियो मत्रीवट खेल।

उदयामांण तूझ अनिकारां,
वल दाखते न पूगा वेल ॥१॥
समर अवाघ सीसि स्यामाउत,
अवि ओरियो नत्रीठै अंग ।
करि करमर खिवता सिरि किलँवां,
उभै दळै वदिया अणभंग ॥२॥
भटकां वघे अभिनमा करमट,
कळह मेलियो दिली-किमाड़ ।
आँखड़माल अनेरा अधपति,
वागन आपा थाट विभाड़ ॥३॥
जगि अँजसे मंडोवर जोधा,
रिण डोहते मंडोवर राउ ।
गढि गढि गौखि गौखि गाईजे,
वदन विहँडिया तणो वणाउ ॥४॥

रच० नरहरदास बारहठ ।

अर्थः—हे मरुदेशीय वीर उदयभानु ! तू ने यलन के रणक्षेत्र में युद्ध छेड़कर शस्त्रों से जब क्षत्रिय का खेल खेला, तब बलवान कहे जाने वाले युद्ध-कृपण वीर, तेरी सहायता के लिए नहीं पहुंचे।

हे श्यामसिंह के पुत्र (या वंशज) ! तू ने जब महान युद्ध में अपना घोड़ा द्रुतगति से बढ़ाया और तेरी तलवार यवन-शत्रुओं पर चमकने लगी, तब दोनों पक्ष की सेना के वीर तुझे पचरह वीर कहने लगे।

हे दिल्ली के कपाट-स्वरूप वीर ! तू नया कर्मसेन वीर है। तू ने

जब आगे बढ़कर शत्रु-सेना से युद्ध छेड़ा, तब सैन्य-समूह के नाशक एवं ऐंठ रखने वाले अन्य नरेश उस युद्ध में सम्मिलित नहीं हुए।

हे मंडोवर के राजवंशज! तुझे युद्ध करते हुए देख तेरे पूर्वज जोधा को एवं तेरे आदि स्थान मंडोवर को ही नहीं, समूचे विश्व को गर्व होता है। इसी प्रकार तेरे शरीर पर लगे घावों के प्रशंसा-गान प्रत्येक दुर्ग के झरोखों से (सुन्दरियों द्वारा) होते रहते हैं।

राठौड़ उदा (उदयसिंह)

[१२] गीत

भुजां आपरां ऊपरै आपरै भरोसै,
निमतिया वँधव कर खाग नागा।
सार मनवार फिर खाय नहँ सकाणा,
ऊदला तणी मनवार आगा ॥१॥
मोहर गोळां सरां ठेल अन मोकळो,
मेल खगधार घ्रत धार माडा।
समर मनवार कुसलेस रा साथनै,
ऊदलै दिराया हाथ आडा ॥२॥
घाल घै मीह लखधीर रै बहादर,
उमेलै टूँकलै गांव आया।
आय भाई सौ दाय कीधी भुगत,
भुगत एकण किया नेपत भाया ॥३॥
जोप जीमण हुओ अजीरण जैमलां,
हींच घायो कटक खींच हूरव्यो।
लोदळक अङक लुटता किता लूटता,
किता रत थूंकता गया फूरळा ॥४॥

(रच० अज्ञा

अर्थः—वीर उदयसिंह ने अपने बाहु-बल पर दृढ़ विश्वास रख बल-म्यान से निकाल शत्रुओं को (युद्धार्थ) आमन्त्रित किया; परन्तु वे (समादृत अतिथि) शस्त्ररूपी आहार पचा नहीं सके (शस्त्र चलाने के आग्रह को नहीं मान लौट गये)।

आमन्त्रित वीरों के सामने तोप के गोले तथा बाणों रूपी अन्न (से बनाये गये खाद्य) में खड्गधार रूपी घृत-धारा का सिंचन कर उदयसिंह ने, विपक्षी कुशलसिंह और उसके साथियों की थाड़े हाथों मनुहार की (ना-ना कहने पर भी युद्ध छेड़ दिया)।

सिंह शावक रूपी लखधीर के वंशज (पुत्र) उदयसिंह ने सोःसाह डूंकले नामक स्थान पर अपने विपक्षि बन्धुओं की युद्ध भूमि में (खूब) भाव भक्ति की (युद्ध के लिए आग्रह किया) और एक ही बार में उन्हें तृप्त कर दिया (युद्ध में छका दिया)।

शस्त्राघात रूपी भोज्य को केवल देखकर ही जयमल के वंशजों की सेना भूमती हुई युद्ध भूमि से चली। कई विपक्षी तृप्त होकर पृथ्वी पर लुढ़कने लगे और कई मुँह से झाग डालते या लहू के कुल्ले करते हुए लौट गये।

राठौड़ कर्मसेन

[१३] गीत

रिण पूगो इसै अमिनमा रासा,
सुपह न पूजे वाग समा।
आगळ वळ सवळां अग राउत,
कमधज जग जांणतो कमा ॥१॥

कंदळ वडो कीध बाधी कळि
चमर वैचाळ महादळ घालि।

निज आछो हूँतौ नवसहसा,
तै दाखियौ तको रणतालि ॥२॥
झुड़िया दळां खळां चडिया झुहि,
वाघरि त्रिवधी धड़ वरण ।
कहता तिम कीधौ केवांणां,
तण आफाळे निभै तण ॥३॥
दूजा चंद सुछलि दिलीवै,
मड़ा भयंकर झूझ भरि ।
सत्र भांजे चाढे ऊळ सेनै,
मित लाधौ साजै मछरि ॥४॥

(रच० बारहठ नरहरदास)

अर्थः—हे राठौड़ कर्मसेन ! तू नये रायसिंह के समान वीर है । युद्ध में तेरे समान कोई अन्य राजा द्रुतगति से बढ़ता हुआ नहीं दिखाई दिया । संसार इस बात को (ठीक तरह) जानता है, कि तू ही एक मात्र सेना तथा बलवान रावत पद धारियों का अग्रगण्य है ।

हे कमधज वीर ! (तू ही एक ऐसा है जो) ऐसे कलियुग में भी महा सेना के बीच चमर चलवाता हुआ भयकर युद्ध करता रहा । (वास्तव में) तू ने ऐसा ही युद्ध किया, जिससे राठौर वीर सम्मानित होते आये हैं ।

हे वीर ! जब तू त्रिविध (अश्वारोही, गजारोही, पैदल) सेना पर काबू करने के लिए बढ़ा, तब तेरे भय से सामना करने वाले (समस्त) शत्रु और सेनायें सामने से हट गईं । हे निर्भय योद्धा ! जैसा तू ने कहा था वैसा ही खड्ग-युद्ध कर दिखाया ।

हे दूसरे ही चन्द्रसेन ! तू ही एक मात्र दिल्ली का रक्षक है । तू ने ही भयंकर युद्ध में शत्रुओं को मारकर अपने पक्ष की सेना को तेजस्विता दी और अपने मित्रों की दृष्टि में वीर माना गया ।

राठौड़ कल्ला

[१४] गीत

नेजा फरक्के तरफ्फां वेहूं हवद्दां सजाय नागां,
वागां त्रम्बी राड़ रा त्यूं सभाय ग्रहास ।
अगंजी घियागां लागां सुलाग दुरंग अछा,
खिजाया भुडंडा धारे मांगड़ा पूं खास ॥१॥

लेगे तोप हल्ला दोवां कुबाया तबक्का लागी,
तुके वागां खुले भंडां ढरेटे तुखार ।
धुके कोन लल्ले नाग तुरक्कां ऊपरे धायो,
मचक्का गोळियां माल पलक्का ज्यूं सार ॥२॥

हीकोटे लेगयो फोजां दलेगां विरोल हल्ला,
बड़ाला मीरगां ठाठे, जिकोटे बाणास ।
रोस झंगा छायो मलो बावीस लाख में रूठो,
मारायां अर्ध्रमे रत्यां रोकियो माणास ॥३॥

चंमरा सहेतां मेवाडमरां उडाया चोड़े,
मल्ले थंडा ठेले बीरां घुम्मरां मचाय ।
चंडिका मरंती पत्रां आकाप अम्मरां छायो,
नरां रूंड मुंडां भल्ले कमाळी नचाय ॥४॥

फरग्गां प्रहारां देखे नारदा तमासा काजे,
हांसा देर ताळी नाचे माचे बीर हाक ।
मोड़े फोजां तोड़े फोलां पगो:मम्बखासा माथे,
मलावोल रूठो तेगां तूटो जीकझाक ॥५॥

अल्ला यूं मसल्लां मुखां पुकारे आराण ऊभा,
तेग भल्ला भल्ला भल्ला धकाले राठोड़ ।
वीरभद्र रूपी रूठो खलां पे कमंध वापो,
रूकां हल्ला होतां उठे खणंका राठोड़ ॥६॥

कळँमां पछाड़े भारी उछाह राण रे कीधो,
ठणंका वजाड़े खागां गयंदां ठेलाण ।
मलेछां हूं कीटे जंगां, धगारां आणरे मूछां,
ऊभो जंगां जीते कलो माण रे अेनाण ॥७॥

(रच० मं डिया रघा, माम नंदु)

अर्थः—दोनों ओर (की सेनाओं के) नेजे फहराने लगे, हाथियों पर होदे कसे जाने लगे, युद्ध-वाद्य बजने लगे, घोड़े सजाये जाने लगे, स्वाभिमानी वीरों ने उत्साहित हो दुर्ग के किंवाड़ खोल डाले, साथ ही प्रमुख २ वीरों ने क्रुद्ध होकर हाथों में लोहकुंत उठा लिये ।

आक्रमण होते ही तोपें दागी जाने लगीं, प्रत्यंचायें टंकार करने लगीं, रातें ऊंचे जाकर घोड़े चढ़ाये जाने लगे, खुली हुई पताकाएं फहराने लगीं, (सेना की भाग दौड़ से) वराह घबरा खाने लगा, शेषनाग लचकने लगा, (कहते हैं) उसी समय वीर (कल्ला) ने तुर्कों पर आक्रमण किया ।

वीर कल्ला ने सिंह कोट (सिंह-द्वार) से ढकेलते हुए शाही सेना का मन्थन कर उसे पीछे हटा दिया । बड़े २ वीरों को खड्गाघातों से नष्ट कर दिया । (इस प्रकार) बाईस लाख शत्रु-सैनिकों पर क्रुद्ध हुए वीर कल्ला के युद्ध को देखने के लिये सूर्य ने भी अपना रथ रोक दिया ।

वीर कल्ला ने जब शाही चिन्ह-चमर मेघाडम्बर आदि तोड़ मरोड़ दिये और ललकार कर युद्ध में हलचल मचाई । वीर समूह को उसने मसल

दिया, तब रणचंडी ने अपना पात्र रक्त से पूर्ण कर लिया, आकाश, देव-विमानों से भर गया। नर-रुंड से मुंड ग्रहण कर भगवान कपाली (शिव) नृत्य करने लगे।

वीर (कल्ला) के खड्गाघात के कौतुक में नारद तल्लीन होगये, बावन ही वीर ताली देदेकर अट्टहास कर नृत्य करते हुए हुँकार करने लगे। (वास्तव में) वह वीर, सेना का मुह मोड़ता और हाथियों को नष्ट करता हुआ शाही खेमे के निकट पहुँच गया। धधकती हुई आग की तरह रुष्ट होकर शस्त्र वर्षा करने लगा।

युद्ध भूमि में वीर (कल्ला) के आतंक से मुसलमान "अल्ला ! अल्ला !!" करने लगे खड्गाघातों से अच्छे २ धीर वीर भी धकेले जाने लगे। उस समय वीर, (कल्ला) वीर भद्र (गण) की तरह शत्रुओं पर रुष्ट होकर आक्रमण करने लगा। साथ ही उसकी तलवार (भी) खन खना उठी।

वीर कल्ला ने यवनों को धराशायी कर महाराणा का हर्ष बढ़ा दिया, झनझनाती तलवारों से कई हाथी ठेल दिये। मूछों पर ताव देकर उस वीर ने विरुद्धी यवनों को युद्ध में हटाते हुए विजय पाई। उस समय वह सूर्य के समान (तेजस्वी) खड़ा दिखाई दिया।

राठौड़ किशनसिंह

[१४] गीत

कुल दीपक नमो पराक्रम केहरि,
महि सादूल हरा कलि मूल।
खागे खल खपां खेड़चा,
मांचा तूं वैरां सादूल ॥१॥
ओखद्‌ माल साल अधपतियां,
हैं वै हरि धातियां हुलाव।

केवी कंठीरे धीर करि माला,
सयल वदै जस राज सुजाव ॥२॥
मिलि जल चोल विचै मेछायण
खग हाथल साझियौ खल ।
महियलि अकल दूसरो मांडण,
वहस वाधियै सहंस वल ॥३॥
असपति द्वारि वधारे ओरिस,
धिजड़े आंगमिया छत्र बंध ।
कूंपा जल चाढियौ नव कोटां,
काको उग्राहियो कमंध ॥४॥

(रच० अज्ञात)

अर्थ— हे शार्दूलसिंह के वंशज (या पौत्र) के सरीसिंह ! तू कुल का दीपक है एवं शत्रुओं के लिये यथार्थ में सिंह के समान युद्ध करने वाला है । हे पराक्रमी राठौड़ वीर ! तूने (असंख्य) शत्रुओं को अपने खड्ग से नष्ट कर दिया है ।

हे यशराज के पुत्र ! तू हठाभिमानी एवं अन्य राजाओं के लिये नटसाल (खटकने वाला) है । उत्साह के साथ जब तलवार उठाकर तू घोड़ा चढ़ाता है, तब तुझे देख कर सब कहते हैं, कि यह वीर यवनों के लिये वास्तविक सिंह है ।

हे दूसरे ही मांडल (मांडा) सदृश तेजस्वी एवं पराक्रमी वीर ! तू यवनों के बीच प्रविष्ट हो उन पर तलवार चलाता हुआ युद्ध आरम्भ करने वाला है । यही कारण है, कि तू पृथ्वी पर अलौकिक वीर माना गया है ।

बादशाह ने जब तुम्हारे स्थान पर अधिक सेना चढ़ाई, तब हे कूंपा के वंशज राठौड़ वीर ! तूने शाही सेना के छत्रधारी वीरों से लोहा ले मरुप्रदेश को शांति युक्त कर दिया और अपने काका (चाचा) को बचा लिया ।

किशनसिंह राठौड़

[१६] गीत

करग ऊंछजे कमँध द्विज देस वाहर किसन,
निवड़ थाकलि हैं वांधियै नेति ।
सांमली घड़ा सौ ऊजलै सावले,
खेमरो वाजियो पाधरे खेति ॥१॥
पड़े धाहा खर त्रिपां बंधण पड़े,
पड़े भुजि भार कुण याग पूजै ।
थड़े उतवंग थरासि खड़े महबूब थसि,
दल मथण कियौ मंडलीक दूजै ॥२॥
पाधरै खड़े संग्रामि सेनाधपति,
थापरै मरौसे मर उजाथे ।
गै गहणि नीजुड़े भड़े गोरी गरट,
हांकिया साह रा सेन हाथे ॥३॥
थंत ओछव करे सामि ध्रम ऊधरे,
वरे असुरी घड़ा निरद वरियां ।
परा गौ रवि मँडल खरा मांडे प्रगट,
धुरा कूंपे धरा भार धरियां ॥४॥

(रच० अज्ञात)

अर्थः— द्विज एवं देश के रक्षक राठौड़ वीर खेमा के पुत्र (या वंशज) किशनसिंह ने सेना का नेतृत्व करने के लिये घोड़े पर कर हाथ उठाये (तलवार चलाई) और श्याम घटा-सदृश सेना पर, चमकता हुआ भाला चलाया।

जब ब्राह्मणों को बंधन में लेने पर हाहाकार ध्वनि होने लगी और इस विपत्ति का भार वीरों की भुजाओं पर आ पड़ा, तब ऐसा कौन वीर था जो उस विपक्षी सैन्य दल का पीछा करता ? शत्रु महबूब खां, जब मस्तक ऊपर उठा कर तलवार चलाने लगा, तब दूसरे ही मंडलीक-तुल्य वीर (किशनसिंह) ने यवन-सेना का नाश कर दिया।

सेनापति (किशनसिंह) ने अपने ही बलबूते पर युद्ध का भार संभालते हुए, घोड़े को सीधा शत्रुओं के सामने बढ़ाया और असंख्य हाथियों से भिड़ता हुआ वह यवन-समूह को काट कर फेंकने लगा। (इस प्रकार) उस (अकेले वीर) ने अपने कराघातों से ही शाही सेना को भगा दिया।

(इस प्रकार) वह यशस्वी वीर श्रेष्ठ कूंपावत (कूंपा का वंशज), पृथ्वी का भार वहन करता हुआ एवं यवन-सेना को वश में करता हुआ स्वामिधर्म का रक्षक बन गया और उस युद्ध भूमि में डट कर मृत्यु-उत्सव को मनाता हुआ सूर्य-मंडल को भेद कर चला गया।

राठौड़ कुबेरसिंह (चौरी)

[१७] गीत

सुद्रब भलूरां साज गजगाह जर दुसाळां,
घव मठां दाह उर दपण चांका।
सुदाता वाह कुबेर ऊँचा सरा,
(थारा) वहे दव राह धज राज-बांका ॥१॥

भूपणां हेम जरिग्राण वाधां भरण,
अन सपह ग्रांण न जुड़ै ग्रदाता।
साथ रा डांय कम-धांण सारां सरे,
छड़े मग दान केकाण खाता ॥२॥

चलँद. चत ऊचरा दपट अण वार रै,
घटापा लार रे पले घोड़ा ।
आहंसी भोक कड़े च असवार रे,
घले आचार रे वंथ घोड़ा ॥३॥

लट गूंघट किया द्रव खरिदे लाखरा,
भलाया आखरां मठे भोका ।
सजोड़े कमँध दत भाग नत साकुरां,
धन सचा ठाकुरां पड़े धोका ॥४॥

(रच० महेशदान)

अर्थः— द्रव्य-वितरण ही जिनके चमकते हुए साज हैं, दान में दिये जाने वाले जरी के दुमाले ही जिनके गजगाह हैं, कवियों के मनमें उत्साह पैदा करना ही जिनका चक्राकृति घूमना है । हे बांके वीर कुबेरसिंह ! उदार पुरुषों के प्रशंसा-वाक्य ही जिनकी ऊँचाई है, ऐसे अश्व तेरे दान-मार्ग पर चलने वाले हैं ।

रथ के आभूषण और दान में दिये जाने वाले जरी के वस्त्र ही जिन (अश्वों) की छलांगें भरना है, सत्य की मस्ती में ही जो झूमते रहते हैं, हे राठौड़ वीर ! तू ऐसे अश्वों को दान-मार्ग पर जोरों से दौड़ाता रहता है । (कह तो) अन्य कौन राजा उनकी कैसे बराबरी कर सकते हैं ?

हे शस्त्रधारी वीर ! तेरे मन का ऊँचाई (उदारता) ही जिनकी ऊँची उड़ान है, तेरी उमंग (उल्लास) ह, जिनकी छलांगें हैं, ऐसे अश्व तू अपने दान-मार्ग पर बढ़ाता रहता है । उन्हें अन्य राजा, इस आडम्बर के साथ नहीं पहुँच पाते ।

हे राठौड़ वीर ! तूने अमित धन-राशि खर्च कर जिन्हें सजा दिया है, यश रूपी रासें पकड़ने पर जो झूमते हुए चलने लगते हैं, ऐसे घोड़ों

को तू बाजी लगाकर हमेशा दान-मार्ग पर दौड़ाता रहता है, जिससे कृपण क्षत्रियों के मन भयातुर हो जाते हैं।

राठौड़ कुशलसिंह

[१८] गीत

चखां नीर बादल थभँग मड़ां थापल सरस,
वाढ काढल खलां वीजलां वाह ।
कमधजां छात कुसलेस होवत कनै,
मियां आवत नहीं मुरधरा माँह ॥१॥

हटकओ धणने वाहि खग हरा वत,
खटक होगी जिका हूँत खसतो ।
माल्हयो राव जो होत फौजां मुदी,
धरा माँहि नको रोद धसतो ॥२॥

दाव चूगो घणां छांडियो देखने,
लोहड़ां भार सत्र करा रौलोट ।
दूसरो तेजसी हुतां राजा दलां,
किलम खड़ आवतो नहीं नवकोट ॥३॥

जोम तज मियां रो कटक हठ जावतो,
समभ फर मनापा दीह साजा ।
राम कुसलेम नूं हुवै कर रावतां,
रेण पलटीजगी नहीं राजा ॥४॥

(रच० अज्ञात)

अर्थः—हे राठौड़ों के मुखिया! यदि आपके पास नेत्रों में कांति लाने वाला, स्वपक्षीय वीरों में उत्साह बढ़ाने वाला एवं खड्गाघातों से शत्रुओं को मार भगा देने वाला (चांपावत) कुशलसिंह जैसा वीर होता, तो यवन आपके मरुदेश में प्रवेश नहीं कर पाते।

हे मरुदेश के स्वामी! यदि वह हरा का वंशज (या पौत्र), आपकी सेना का नेतृत्व करता तो अपनी तलवार से यवनों को रोक देता, घुसने वालों (दुश्मनों) से टक्कर लेता और आपके भूभाग में यवनों का प्रवेश नहीं होने देता।

यवन-सेना-पति को दाव लगाते एवं शस्त्रास्त्र द्वारा वीरों को धराशायी करते देख सब वीर युद्ध भूमि छोड़ गये; परन्तु हे नरेश्वर! तू दूसरे ही तेजसिंह के समान उस वीर (कुशलसिंह) को यदि अपनी सेना में रख लेता तो यवन, तेरे प्रदेश में (कभी नहीं) आ पाते।

हे मरुधर स्वामी! यदि तू युद्ध में उस वीर कुशलसिंह को नेता बना देता, तो यवन-सेना-पति का गर्व चूर चूर हो जाता और जनता भी तुझ से विरुद्ध नहीं होती।

राठौड़ कूंपा

[१६] गीत

किलवी पड़ सरिस कलहियां कूंपा,
तुंडि आवे माही रसाताल।
धाड़ धाड़ जग तणा फल़ प्रामै,
धाड़ धाड़ विसँघ करे धांटल़ ॥१॥

महिराजौत मुरधरा मिटती,
पंडर घड़ी मरिस प्रतिमाल़।

क्रमि क्रमि ज्यग करै कूंपकन,
फूंपो गज गूड़े करिमाळ ॥२॥
मेद्धा राइ तणा दल माँहीं,
मनि माणियो मुरधरा मोड़ ।
पाइ पाइ ज्यग करै पोठा पणि,
ठौड़ हसति गूंड़े राठौड़ ॥३॥
मारूधरा मलेछ माल्हतै,
माल कळोधर विढिमुत्रा ।
हूँ होम जै... पाइ पाइ हुया,
हाथी घाइ... विसंध हुया ॥४॥

(र० अज्ञात)

अर्थः—घमासान युद्ध में घोड़ा बढ़ाते हुए वीर कूंपा ने युद्ध छेड़ दिया और पग-पग पर यज्ञ-फल प्राप्त कर खड्गों के प्रहार से घंटाधारी हाथियों के अंगों की जोड़ (संधियां) तोड़ दी ।

मरुभूमि का नाश होता देख क्रुद्ध मेहराज का वंशज वीर कूंपा, शत्रुओं पर खड्गाघात करने लगा और पग-पग पर यज्ञ (का फल प्राप्त) करता हुआ हाथियों को काट २ कर गिराने लगा ।

यह वीर, यवनों एवं जोधपुर-स्वामी की सेनाओं में राठौड़ वंश का सिरमौर माना जाने लगा । (वास्तव में) उसने जवानी में ही पग-पग पर यज्ञ करते हुए युद्ध भूमि में हाथियों को गिरा दिया ।

मरुभूमि पर मस्ती में झूमते हुए यवनों को आते देखकर, मालदेव की कला धारण करने वाला वीर (कूंपा) युद्ध करता हुआ कटकर मारागया । परन्तु उसने पग-पग पर अश्वों को मारकर अश्वमेध यज्ञ किया, जिसमें (असंख्य) हाथी टुकड़े २ होगये ।

राठौड़ केसरीसिंह

[२०] गीत

आहुड़ियां छात्र दखिण औवरवै,
लांजी वाधे गयण लग।
कटकां थंभ हुवौ नव कोटी,
केहरि वावरतौ करग ॥१॥
ऊदा हरी लाखदल आगल,
सारे मलियो प्रता सुध।
वाखांणियौ वीर वीरा रसि,
जोधपुरौ डोहतौ जुध ॥२॥
मेर प्रजाद समोभ्रम माधव,
विजुड़ै निजुड़ौ छत्रबंध।
कलहणि धणी हुवौ कन्नोजौ,
किलमां धमरोलतौ कमंध ॥३॥
सुहि खँडियौ वीराजै महियलि,
दल आभरण गंगेव दुवो।
वाहिम नरां हूँवां ऊपर वट,
हवड़ो के भ्रवि देव हुवो ॥४॥

अर्थः— गगनस्पर्शी नेजा, (ध्वज, निशान) उठाकर दक्षिण और उत्तर के क्षत्रिय जब जूझ पड़े, तब राठोड़ वीर केशरसिंह सेना में स्तंभ स्वरूप हो तलवार चलाने लगा। (२५० अज्ञात)

सूचना पाते ही वीर उदय के पौत्र (या वंशज) राठौड़ ने, लाखों संख्या वाली सेना के हरावल में हो जब शस्त्र से शस्त्र भिड़ाया और सेना को मथते हुए लड़ने लगा, तब उसके वीरत्व की सबने प्रशंसा की।

माधवसिंह की भांति देने वाला, मर्यादा का सुमेरु, कन्नौज राजवंशी, छत्रधारी राठौड़ (केशरीसिंह), तलवार से तलवार मिलाता, एवं यवनों पर शस्त्र प्रहार करता हुआ युद्ध में प्रमुख वीर माना गया।

दूसरे ही गांगा तुल्य वह वीर सेना का विभूषण-तुल्य था। उसने (युद्ध में) अपना मस्तक कटा कर पृथ्वी पर सुशोभित होते हुए महान् पुरुषों से (भी) उच्च स्थान प्राप्त किया। (वास्तव में) ऐसा श्रेष्ठ अवसर देवताओं को भी नहीं मिला।

महाराजा गजसिंह जोधपुर

[२१] गीत

दिलिचे महां किमाड़ दुर्थंगम,
धाए सिधि सुरतन धणी।
पारूम गजण सनेहो पाखां,
तू सुरिज कमधजां तणो ॥१॥

ऊतर दलां वडाळो आगल,
जोधाणे चाढणे जल।
मुकति ग्रंन ओहैंच नव सहसा,
मलखे तूं दिनकर सकल ॥२॥

सेनाधपति सूर समोभ्रम,
किया अजाची जेण कवि।
राई तनै तिलक न्यारिय मल,
राठौड़े ऊजळो रवि ॥३॥

खागां वलि भागा खुंदाळम,
सुकवि किया गजबंध समाथ ।
हींदूकार तणो सिरि हूवा
हिंदवां छात तुहारा हाथ ॥४॥

(रचयिताः— अज्ञात)

अर्थः— हे राठौड़ों के सूर्य रूप गजसिंह ! तू दिल्ली के योद्धाओं के लिये (रोकने के लिये) मजबूत किवाड़ है, तू विशेष पराक्रमी है । यही कारण है कि, आगे होकर तूने विपक्षियों को नष्ट कर दिया । (इस उपरांत) तू कवियों के साथ स्नेह निभाने वाला है ।

हे सलखा के वंशज ! तू उत्तर से आने वाली (दिल्ली की) सेना के लिये भारी अर्गला, जोधपुर राज्य को चमकाने वाला, कवियों का आश्रम एवं संसार के लिये सूर्य रूप है ।

हे सेनाधिपति, शूरसिंह की भांति देने वाले, राजवंशजों के तिलक, राठोड़ों के चमकते सूर्य गजसिंह ! (संसार में) कवियों को तूने अयाचक (न मांगने वाले, धन धान्यपूर्ण) कर दिया है ।

हे हिंदुओं के छत्र स्वरूपी नरेश ! तूने अपनी तलवार की शक्ति से यवनों को भगा दिया । तू ही एक ऐसा समर्थ है, जो कवियों को हाथी दे देता है । हिन्दू मर्यादा के मस्तक पर हाथ रख कर तूने ही उसे ढाढ़स बँधाया है ।

गोपीनाथ राठौड़

[२८] गीत

गुण लागां डांण वखांणा खत्री गुर,
आचण मिले जगत सहि जात ।

मंगल-जस थारो मेड़तिया,
गिरवर मद आयो वड गात ।।१।।

सत पोगर मोजां दांतूसळ,
डाणे अदुयां लंगर डहे ।
ऊपट थटां पटां मद आयो,
मदझर जिम जसवास महे ।।२।।

घुघर चमक घटा कवि बिद घग,
धरिये साहस नेह धज ।
दह राहां ऊपरे दूदावत,
गाज करे सोभाग गज ।।३।।

कुरहर बँध कवियो विच फोजां,
कवणा घां सूंदतो कपाल ।
सिंधुर जस थारो नव सहसा,
छहरित वारह मास छँछाल ।।४।।

(रचयिता:—जगा खड़िया)

अर्थः—हे मेड़तिया वन्य क्षत्रिय ! तेरा यह मदयवाला हुआ यश-कुंजर, गिरिकाय (उन्नत) हो (सर्वत्र) विचरण करता है (अर्थात् देश देशांतरों तक तेरी कीर्ति फैली हुई है ।) तेरे यहां याचना की दृष्टि से जो आते हैं, वे उस यश कुंजर को मस्ती में झूमता हुआ पा और अधिक विरुदाने लगते हैं (वचनावली विशेष के प्रयोग से प्रोत्साहित करते हैं) ।

तुम्हारा सत (प्रण-पालन की दृढ़ता) ही, उस यश-कुंजर का पोगर (सूंड का अग्रभाग) है । तुम्हारी उमंगें ही उसकी दंतमूलें (दांत) । दानाई की लोह शृंखला उसके पैरों में पड़ी हुई है । , इस उपरांत)

यह यश-कुंजर, दान-पत्रों रूपी-पटा चलाता एवं मद-बरसाता हुआ पृथ्वी पर सौरभ फैलाता रहता है।

तुम्हारी विरुद्-ध्वनि (यश-गुण-गान) ही, उस यश कुंजर के चमकीले घुंघरु एवं घंटाओं की ध्वनि है। तुम्हारे साहस एवं स्नेह से बनी दुरंगी ध्वजा उस पर फहराती रहती है। (इस उपरांत) तेरा वह यश कुंजर, हिन्दुओं एवं यवनों पर तेरी भाग्य-प्रशंसा की गर्जना करता रहता है।

तेरा वह यश रूपी कुंजर, कृपणों के कपाल कुचलता हुआ सेना के बीच बड़ा ही सुशोभित होता है। उसके ऊपर साहस एवं स्नेह की दुरङ्गी ध्वजा फहराती है। हे राठौड़ वीर! (वास्तव में) तुम्हारा यह यश-सिंधुर छहों ऋतु एवं बारहों मास मस्त रहता है।

राठौड़ वीर चांदा (मेड़तिया)

[२३] गीत

चौरंग चूरिया वर विढे चांदै,
भीड़े नवली भांति।
गोरणी काढे गात्र गोखै,
रडं गयली राति ॥१॥
मांजियां वीरमदेव संभव,
मछर चढि रिणि मीर।
कर मोड़ि चीरी त्रोड़ि कंकण,
नयण नांखै नीर ॥२॥
मरतार चांदै लिया मिड्वै,
धड़ङ्कि थरि खग धार।
सांमहे मामण तणी सेखां,
हुरम त्रोड़ै हार ॥३॥

मारिया चांदै मीर मांझी,
खेध चढि रण खंति ।
सारंग नयणी कंठ सारँग,
घूघर संभा रंति ॥४॥

(रचयिता रामा 'सांदू')

अर्थः—शाह की चतुरङ्गिणी सेना का कचूमर निकाल कर वीर चांदा ने अनोखा युद्ध ठाना। कितने ही यवनों को काट दिया, (जिससे) उनकी पत्नियां, झरोखों से पति की राह देखने के लिये अङ्गों को बाहर निकालती हुई आधी रात में रोने लगी।

वीरमदेव के पुत्र (चांदा) ने मस्त होकर युद्ध में (असंख्य) मीरों (यवनों) को नष्ट कर दिया। (जिससे) उन (यवनों) की रोती-बिलखती स्त्रियों ने अपने हाथों को मरोड़ कर कंकण तोड़ दिये।

हरमी के स्वामियों (शाही खानदान के वीरों) को जब वीर चांदा ने अपनी तलवार से काट दिया, तब शेखों (यवनों) की षोडशा बालायें शाम को सूचना पाकर अपने अहिवत-चिन्ह-हारों को तोड़ने लगी।

जब वीर चांदा ने वीरों के मुखियाओं को खदेड़कर रणक्षेत्र में नष्ट कर दिया, तब उन मृत वीरों की मृगनयनी—कोकिलकण्ठी सुन्दरियां अपने २ पति को याद कर रोने लगी।

जगन्नाथ राठौड़

[२५] गीत

करतो खेल ऊमेल देयतां कमँधज,
पाध असमांण उडि पनग सिरि पाऊ ।
पिढ़ि जिसौ पाय जगनाथ दीठौ प्रिथी,
रांद्र पद देवतो मारूवां राऊ ॥१॥

आवरे तार जुध भार माफी अभँग,
　　आवि थण पार दल् हिये अड़ियाँ ।
सुतन जसराज दाँतूमलाँ सावलाँ,
　　चाढ़तौ मड़ित जग मीट चड़ियाँ ॥२॥

चूर करतो हमति पूर लोहां चढ़े,
　　निहमतां निमै जणि जणि नत्रिठाँ ।
ऊजळो सूर कलियांण हर आभरण,
　　डोहतौ थाट संमारि दीठाँ ॥३॥

खोद खसिया उभै दळां मानी खड़सि,
　　समरिते प्रवाड़ाँ वड़ाँ मीधाँ ।
कियेँ मुख चोळ घमरोळ धारां करे,
　　कमधि गज बोळ हीलोळ कीधाँ ॥४॥

(१५० नरहरदास बारहठ)

अर्थ:—मारवाड़ का वीर जगन्नाथ राठौड़ जब भाले का वार कर दुश्मनों को उलटने लगा, तब (ऐसा जान पड़ा मानों) उसके हाथ आसमान से से जा लगे और पैर शेष नाग के मस्तक पर टिक गये । (वास्तव में उस समय) वह अर्जुन के समान दिखाई देने लगा । (उस युद्ध में) उसने यवनों के अंगों को (शस्त्रों से) विदीर्ण कर दिया ।

जसराज का पुत्र-जो अभंग वीरों का मुखिया था, जब अपार (दुश्मन)-सेना आ धमकी, तब वह भाला लेकर हाथियों के दन्त सूलों पर अपने घोड़े के पैर दिला दुश्मन से भिड़ गया । उसका वह दृश्य संसार की आँखों में बस गया ।

कल्याणसिंह के वंशजों का आभूषण-समान यह वीर, शस्त्रधारियों का सामना कर हाथियों को नष्ट करने लगा। प्रत्येक शत्रु को उसने शस्त्र-घात द्वारा नष्ट कर दिया। (उस युद्ध में) वह वीर शत्रु समूह का मंथन करता हुआ संसार को दिखाई दिया।

दोनों सेनाओं में जब वीर नष्ट होने लगे, तब उस कमधज वीर का मुख और अधिक (क्रोध से) अरुण वर्ण होगया। उसने जब खड्ग-घात शुरु किये तो यवन योद्धा रण से (पीछे) हट गये। उस युद्ध में हाथियों को नष्ट कर उस उन्मत्त वीर ने ख्याति प्राप्त की।

महाराजा जसवंतसिंह (प्रथम) जोधपुर

[२५] गीत

दल लाख धणी आगळ दिल्ली दळ,
कमळ झलहळै धूर किरि।
जगि जग जेठ प्रतपियौ जसवँत,
जोध कळोधर जोधगिरि ॥१॥

कळा सपूर उजळा करतब,
नव फौटा मोटा नख्यत्र।
पत्र जै पित भाग खंदाळम,
खरै खड़कियाँ तिकोई खत्र ॥२॥

सेना नरां साहणां मामंद्र,
इंद्र विधौ सुरधरा अधीस।
सुरकवर्णी गंजरंध समोभव,
मोहे धण आडंबर धीस ॥३॥

राजापति रूप-- राठौड़ा,
रूके अमू पाखरों रह ।
थालों धम, कला- अंगंती वह,
सूर - हरी प्रतें - मगह ॥४॥

(स्व० नरहरदास बारहठ)

अर्थः—जोधा का वंशज महाराजा जसवन्तसिंह, असंख्य-सेना के अधिपति दिल्लीश्वर का अमोघ योद्धा है, जो जेठमास की प्रखर किरणों की तरह अपना तेज फैलाता हुआ सूर्य के समान जोधपुर (राज्य) पर तपता (राज्य) रहता है ।

मुख्य नक्षत्र (सूर्य) के समान इस मरुदेशीय क्षत्रिय के पवित्र कर्तव्य, प्रसारित किरणों के समान उज्वल हैं । युद्ध-क्षेत्र से यवनों के भाग जाने पर इसी वीर ने कंधा देकर बात रखी और जय-पत्र प्राप्त किया ।

सिंधु-समान पैदल और अश्वारोही सेना में यह वीर इन्द्र के समान लगता है । गजसिंह के समान ही यह युद्ध करने वाला प्रसिद्ध वीर है और इसी के शरीर पर (राजोचित) विशेष आडम्बर फबते हैं

राजराजेश्वर सूरसिंह का पौत्र यह राठौड़ वीर अपने वंश के लिये शोभा-स्वरूप है । यह अपने खड्ग को पवित्रता देता रहता है । धर्म-प्रिय यह वीर अपनी कलायें फैलाताहुआ अधिक प्रतापी होकर सुशोभित होतारहता है ।

महाराजा जसवंतसिंह (जोधपुर)
[२६] गीत

मगह सूर संग्राम दुतिवंत वरे मांफलूं,
माड वट करंतां मंदिर आडे ।

दलां री सीह असमांण खित्रतै दुजड़ि,
जसौ रूधो खले दले जाड़े ॥१॥

हेक चढियो डरड़ि लाख थाटां हिये,
जोध जोधां वधे वरण रण जंग।
ऊछरां छरांगज मार करतौ असंध,
गयणी छिवते कमळि दूसरौ गंग ॥२॥

घरे जुध मार राठौड़ बांधे धड़ै,
खेंग अगि मेलियौ सार खूरै।
अतुल बळ मांभिए गयौ लागां अरसि
चापड़े चौंरड़ी धड़ा चूरै ॥३॥

हुवां दळ आड पह चाड ऊदा हरो,
पाड़ि खल वंस जल चाढि पूरौ।
हर वट प्रगट अणरेह दीपै सयलि,
मड़ अनड़ दलां सिंणगार भूरौं ॥४॥

(रच० बारहठ नरहरदास)

अर्थः— महान् वीर जसवंतसिंह ने हस्तिनियों (माइठों) को संकट में डाल कर रोका और भविष्य को भी रोक दिया अर्थात् अपने प्रति होनहार को भी टाल दिया। सेना में उस सिंह स्वरूपी वीर ने चमकती हुई तलवार से आसमान को छूते हुए दुश्मन की सारी सेना को रोंध दिया।

दूसरे ही गंगावीर के समान वह जसवंतसिंह आक्रमण कर अकेला लाखों सैनिकों की छाती पर चढ़ बैठा। साथ ही युद्ध क्षेत्र को अपने वश में करता हुआ शत्रु पक्ष के वीरों को नष्ट करने लगा। आकाश को मस्तक

दलां री सीह असमांण खित्रतै दुजड़ि,
जसौ रूधो खल़े दल़े जाड़े ॥१॥

हेक चढियो डरड़ि लाख थाटां हिये,
जोध जोधां वधे वरण रण जंग।
ऊछरां छरांगज्ञ मार करतौ असंध,
गयणी छित्रते कमळि दूसरौ गंग ॥२॥

धरे जुध मार राठौड़ बांधै धड़ै,
खैग अगि मेलियौ सार खूंरै।
अतुल बळ मांभिए गयौ लागौ अरसि
चापड़े चौवड़ी धड़ा चूरै ॥३॥

हुवौ दळ आड पह चाड ऊदा हरो,
पाड़ि खल़ वंस जल़ धाढि पूरौ।
हर घट प्रगट अणरेह दीपै सपलि,
मड़ अनड़ दलां सिंणगार भूरौ ॥४॥

(रच० बारहठ नरहरदास)

अर्थः— महान् वीर जसवंतसिंह ने दक्षिणियों (मरहठों) को संकट में डाल कर रोका और भविष्य को भी रोक दिया अर्थात् आने वाले होनहार को भी टाल दिया। सेना में उस सिंह स्वरूपी वीर ने चमकती हुई तलवार से आसमान को छूते हुए दुश्मन की भारी सेना को रौंध दिया।

दूसरे ही गंगापेर के समान वह जसवंतसिंह आक्रमण कर अकेला लाखों सैनिकों की छाती पर चढ़ बैठा। साथ ही युद्ध क्षेत्र को अपने वश में करता हुआ शत्रु पक्ष के वीरों को नष्ट करने लगा। आकाश को मस्तक से

छूते हुए (उन्नत होकर) उसने अच्छे २ गजारोही बहादुरों (युद्धरत वीरों) को (तलवार से) काट कर हाथियों का भार हलका कर दिया।

दृढ़ प्रतिज्ञ होकर राठौड़ वीर ने युद्ध-भार धारण किया (लड़ने को तय्यार हुआ) और अपना घोड़ा (युद्ध में) बढ़ाकर आघातों से खड्ग की धार नष्ट करने लगा (तलवार की धार आघातों से घिसने लगी कुंठित होने लगी)। (इस प्रकार) धजराज़ी वीरों का वह मुखिया (राठौड़) गगन को छूता हुआ ललकार कर चतुरंगिणी सेना का कचूमर निकालने लगा।

शत्रु-सेना के चढ़ आने पर उदय का वह पौत्र (या वंशज) अपनी सेना की अर्गला बनकर शत्रुओं को धराशायी करने लगा, जिससे उसका वंश अभिमान हो उठा। युद्ध करते समय उसके शरीर पर शूरता की स्वाभाविक मरोड़ दिखलाई दी। (वास्तव में) वह स्वाभिमानी वीर सेना का शृंगार बन गया।

महाराजा जसवंतसिंह (जोधपुर)

[२७] गीत

पतसाह उमे सँग सबल पारथी,
दोया दल दिहुँ रज दांण।
राजा तीन पहर लग रहियो,
एकला गज घड़ो आरांण ॥१॥

दांतक धार वाहतां दूजड़ां,
माहू आलूयनो मुख।
म्यदां थाहर बीच रोकियो,
राजा कवल वराह रुख ॥२॥

ओफरवों धमतो हाकलतो,
उचंढ़तो करतो रण आल।

रह थइ कर जोधपुरी रहियो,
तीजा पहर लगे रण ताल ॥३॥

गाजी तणौ जसो हैकल गिड़,
सिल उर नीठ किसे सुरतांण।

बांकमि सो पलवौ (ऊ) पलवौ,
आंख दिखाळ गयो आयांण ॥४॥

(रच० संगार ३६६)

अर्थः—शिकारियों के समान दोनों शक्तिशाली बादशाहों ने अपनी अपनी सेना राजसी ठाटबाट से बढ़ाई; परन्तु अकेले (मरुप्रदेश के) नरेश ने वाराह की भांति, शत्रु-रूपी शिकारियों के हाथियों को युद्ध में रोक दिये।

जब शिकारियों की तरह मुसलमानों ने, अपने स्थान (जोधपुर) की ओर लौटते हुए वाराह रूपी मरुदेशीय नरेश को रोकना चाहा, तब वह दांत कट-कटाता हुआ अपनी दंतमुल (अथवा तलवार) का प्रहार कर रोकने वालों (मुसलमानों) को घायल करने लगा।

नासारंध्रों को बजाता, दांत पीसता, झकरता और हठ पूर्वक लड़ता हुआ अपने स्थान की ओर जाने वाले रास्ते को साफ करता हुआ मरुदेशीय वाराह तीन प्रहर तक युद्ध करता रहा।

गजसिंह का पुत्र जसवंतसिंह जो अकेले वाराह के समान था, बादशाह के शिला-तुल्य वक्षस्थल से घर्षण करता हुआ जोश में आकर (केवल) घूरता (क्रोध से आंखें बताता) हुआ अपने स्थान पर लौट आया।

जालमसिंह मेड़तिया राठौड़

[२८] गीत

धरा चाढ मांठी मिले थाट मोटे धड़े,
पंडवां सवाबी तुरां पाखर पड़े।

हुवां वीरा किलक जोगणी हड़हड़े,
नालिमो कणी सिर आज ससतर जड़े ॥१॥
आवलां भींच कड़छे प्रगट ऊससे,
जाक चकरी फिरे नाक हड़ हड़ जसे।
आग घख लोयणां रुप वणियो यसे,
केहरी तणो किण सीस आवध कसे ॥२॥
निडर ज्ञाका कसे कहे डर नाणियों,
तोल खग रमां सिर मूंछ कर तांणियो।
आगली माफ्फर हजारी आणियो,
नालमो देख रंग जरांठी जाणियो ॥३॥
रोड़ वज हेमरां आग घमगारियां,
घरज मालो खिवे प्रभागो घारियां।
भूम गूगल गयण चढ़े रज मारियां,
तूटसी घणा सिर आज तरवारियां ॥४॥
खयँग उजड़े बहे चकारो तव खुरे,
हुवे मालां खिवण नगारो गरंहरे।
पसो आयो निज चाचरे ऊपरे,
आज अहवात थरि नारियां उतरे ॥५॥
घेर चावत्र प्रगट फरे रावत घणे,
बाह विजूजलाँ ढाह विसंणां त्रणे।
संमरां वींटिया सुजंस श्रवणा सुणे,
पातलां सींह घो झोक मांटी पणे ॥६॥

(र० खड़िया बलतरान)

अर्थः— प्रसिद्ध सामन्त, बड़ी २- मंत्रणा करते हुए समूह बद्ध हो रहे हैं, सईसों द्वारा घोड़ों पर शीघ्रता से पाखरें डाली जा रही हैं, बावन वीर किलकारी कर रहे हैं और योगिनियां अट्टहास कर रही हैं। यह सब देख कर विचार उठता है, कि हे वीर जालमसिंह! आज तू किस (शत्रु) पर शस्त्राघात करेगा?

अंग मरोड़ते हुए भयानक वीर सामने क्रुद्ध होरहे हैं, जिनसे पृथ्वी चक्कर खाने लगी साथ ही नाग (शेषनाग) घसीटाने लगा है, और हे वीर केशरीसिंह के वंशज! स्वयं तुम्हारे नेत्र अंगारों के समान धधक रहे हैं। अतः इस रूप में आज यह किस पर शस्त्र कस रहे हो?

हे निर्भयसिंह एवं अशंकित वीर जालमसिंह! तू उन्मह पूर्वक (कमर) कस कर तलवार उठाते हुए शत्रुओं पर मूँछें तान रहा है, साथ ही तेरे लिये हजारों रुपयों का कीमती घोड़ा सजाकर सामने लाया जा रहा है। इस रंग ढंग से ऐसा जान पड़ता है, कि आज खूनखच्चर होकर ही रहेगा।

घोड़ों के पैरों की हड़बड़ाहट (दौड़ते हुए घोड़ों की टाप-ध्वान) के साथ २ नालों से आग चमक रही है, तिधारे (तीन धार वाले) भाले शान से चमक रहे हैं. (चकाचौंध से) पृथ्वी गुगलवर्ण-सी (भासित) हो रही है, आकाश में धूल छा गई है। अतः (इस रंग ढंग से) मालूम होता है, कि आज तलवारों से असख्य मस्तक कट कर रहेंगे।

हे चक्करों (के लक्षणों से युक्त जालमसिंह)! तू (स्वयं) बरछा चमकाता हुआ अपना घोड़ा बेतहाशा दौड़ा कर शीघ्र आगे बढ़ रहा है! गरजते हुए नक्कारे बज रहे हैं। और तू जो आज ऐसा उन्नत मस्तक दिखाई दे रहा है उससे ऐसा ज्ञात होता है, कि शत्रुओं की स्त्रियों का अहिवात (सुहाग) चिन्ह आज उतर कर ही रहेगा।

हे पतले सिंह (के समान जालमसिंह)! ऐसा ज्ञात होता है, कि तू ललकार कर फिरसे असंख्य रावत-पद-धारियों को घेर लेगा और तेरी तलवार के आघात शत्रुओं के नाश का कारण बन जायगे। इसके उपरांत युद्ध में (शत्रु द्वारा) गिर कर (भी) अपनी कीर्ति सुनता हुआ तू जबरदस्त विपक्षियों पर शस्त्राघात करेगा।

जैतसिंह चाँपावत

[२६] गीत

दिलीसतारो खीजपी सेना फेलसी लेखवे दोखी,
बीचसी हत्रोला भूरां थोखी तेण वार ।
रूकां जेत मारवां चाह तो खलां कीधो राजा,
जैतो मोटे काम थाडो आवतो जोधार ॥१॥
कई भला माँजणो गांजणो साहां लाग केवे,
जो दहुँ राहां छत्र वांधणो सजोड़ ।
चमू रिमां टेल एहा काम जोग हुँतो चांपो,
एहा चूक जोग चांपो न हुँतो अरोड़ ॥२॥
खेमा लाखां झोकि गाहे मेड़ते गनीमा खेत,
नागाण समाहे फोजां हिचंते निहाव ।
सत्रां थटां माथे मेलि मारणो छो मीढ़ साजा,
राजा यों न मारणो छो रिण मला राव ॥३॥
पातसाहां चोड़े हिचे थंभे पात साही पाणा,
राजा ई मदाई पाणां न चीती रहेत ।
आडा खंडां हिनारो जोधाण नाप आप ऊभा,
आडा थंडां माथे मेल मारणो छो जैत ॥४॥
राजा भांण वंसी आ अजोणी कीधी बीजा राजा,
छत्रधारी दाद को न कीधी हींदू छात ।
कमंधां लागांग वेत्र दीये माथा राज काजा,
नागाणा धू कीधो जिके जोधाणा रो नात ॥५॥

अजा आगे स्याम-ध्रमो अफारो जसा वाला,
　　उजाळियो जैत सारो अखे वाह वाह ।
दाई यावे कहे लाग आकरी अजीत दुजा,
　　स्याम ध्रमो चाकरी न दीठी बीजे साह ॥६॥

हहंकार डाक बाजे भूलोक अचंभे हुवो,
　　सुरांलोक अचंभे अचंभे लोक सेस ।
जोधाण नाथ तो हाथ हणे स्यानध्रमी जेतौ,
　　न खंमे वात रे नाथ त्रिलोक नरेस ॥७॥

कोप रूद्र छांडसी अलोप गंग वेसी कळ,
　　ध्रजादा लोपसी दधां लोपे मोह मांन ।
दुर्कनी हणूं जै दोख सावंदां चावियो हमें,
　　जाण जो आज तो कळू आंवियो जिहांन ॥८॥

वखतेस नंद अहो रूद्र रूप भूप विजा,
　　सता को दिठावे तूज जाणियो समंध ।
आप जिहीं थाट को धावसी घोड़ा मारूपळा,
　　कुसलेस वाळो हिये सालसी कमंध ॥९॥

(रचयिता:- मोतीसर प्रभुदान)

अर्थः— हे महाराजा विजयसिंह ! यह स्पष्ट दिखाई दे रहा है कि, दिल्ली और सितारा का शासक क्रुद्ध हं कर अपनी २ सेनाओं से मारवाड़ को घेर लेंगे और जोरों से आक्रमण होगा। ऐसी आपत्ति के समय वीर जैतसिंह अर्गला बन सकता था, परन्तु उसे तो तूने तलवार के आघात से मर-

चाही दिया । (वास्तव में) यह बुरा ही हुआ । तूने ऐसा कर शत्रुओं की मनचाही कर दी।

हे राजन् ! वीर चांपावत जेतसिंह कई प्रांतों को नष्ट करने वाला बादशाहों के पीछे पड़कर उन्हें दबा देने वाला शत्रु सेना को पीछे धकेल देने वाला और बड़े२ काम करने वाला था-। ऐसा स्वाभिमानी वह वीर धोखे से मारने योग्य नहीं था।

हे नरेश्वर ! मेड़ता स्थान पर लाखों शत्रुओं के पड़ाव को जिसने कुचल दिया और जिसने, नागोर में सेना का सामना होने पर शत्रुओं को घायल कर दिया, ऐसे रणमल के वंशज वीर (जेतसिंह) को (तो) शत्रु-समूह पर प्रेषित कर युद्ध में सफलता प्राप्त करनी चाहिये थी, उसे इस प्रकार (धोखे से) नष्ट नहीं करा देना चाहिये था।

हे जोधपुर के स्वामी ! शाही सेना को रोककर बादशाहों को लौटा देने वाले एवं आपके राजत्व को सुस्थिर (निश्चिंत) रखने वाले वीर (जेतसिंह) को इस प्रकार आपके देखते हुए (धोखे से) खड्गाघात से नष्ट नहीं कराना चाहिये था।

हे सूर्य-वंशी नरेश्वर विजयसिंह ! जोधपुर का राजवंशी (जेतसिंह) राठौड़ों की शान रखने के लिये मस्तक देने वाला था। यह नागोर के युद्ध से स्पष्ट है। ऐसे वीर को मरवा कर (वास्तव में) तूने अनुचित किया। कोई भी नरेश तेरी इस अयोग्य चर्चा की प्रशंसा नहीं कर सकता (निंदा ही की जाती है)।

हे दूसरे ही अजीतसिंह के समान महाराजा विजयसिंह ! आप यह भली भांति जानते हैं, कि अजीतसिंह के समय इसी (जेतसिंह) के पूर्वज ने विशेष रूप से स्वामिभक्ति प्रदर्शित की थी और उसी स्वामिभक्ति को जेतसिंह ने (आगे चलकर) उज्ज्वल किया था, जिसकी प्रशंसा सब करते हैं। (राजन् !) तुम्हें सत्य बात कटु अवश्य लगेगी; परन्तु यह स्पष्ट है कि तुम उसके स्वामिधर्म पालन और सेवा को परख नहीं सके।

हे जोधपुर के स्वामी ! तेरे द्वारा स्वामिभक्त के मारे जाने पर संसार में महान् हा-हाकार मच गया है। देव और नाग-लोक भी आश्चर्य-चकित हैं। त्रैलोक्य के ईश (विष्णु) भी इस अनुचित कृत्य को देखकर क्षमा नहीं करेगा।

यदि शिव, अपनी क्रुद्ध प्रकृति छोड़ दे, गंगा लुप्त हो जाय, समुद्र कार (परिधि) छोड़ दे, मनुष्य ममत्व और अभिमान छोड़ दे, परन्तु (इतना होने पर भी) आपने जो जान बूझ कर (जेतसिंह का धोखाभरा हत्यारूपी) कलंकित कर्म किया है, वह मिटने का नहीं है, जान पड़ता है अब संसार में पूरी तरह कलियुग आ गया है (तब ही, आप जैसे महान् पुरुष भी ऐसे हीन कार्य करने लगे हैं)।

हे वख्तसिंह के पुत्र विजयसिंह ! आप स्वयं रुद्र स्वरूप हैं। कुशलसिंह के पुत्र (जेतसिंह) के विषय में अच्छी तरह जानते हैं। (परन्तु) अब आपको सही मंत्रणा कौन देगा ? (वास्तव में) जब आप ठाटबाट के साथ शत्रुओं पर घोड़ा बढ़ायेंगे, तब वह (जेतसिंह) याद आयेगा और उसका अभाव आपको खटकेगा।

ठाकुर जेतसिंह राठौड़, बदनोर (मेवाड़)

[३०] गीत

कसे आड़ बँद कवर अगतुचा मीड़े कँगळ,
भभूति लसे थंबर सुभेता।
जोड़ वाथ तुरत पुरी दरसे जठै,
जती गोरख उसे रूप जेता ॥१॥
सामतां हवोळां लिया टोळां सखा
धूत गोळा खड़ग पाण धारू।
ईढ गर नवादां यचै जूना अखड़,
महत पूना नमो राव मारू ॥२॥

अर्थः— कटि-बंधन ही मेखला कवच ही मृगत्वचा है, सुयश ही विभूति है और साथी वीर ही 'पुरी' उपदंकधारी ('पुरी' उपाधिधारी) योगी तेरे समीप दिखाई देते हैं, जिससे हे जैत्रसिंह ! तू यति गोरख के समान भासित होता है।

सामन्त-गण ही शिष्य समुदाय है, हाथ में पकड़ा हुआ खड्ग ही विभूति का गोला है और जब तू अपने से नये योगियों (नरेशों) के बीच (बैठता है), तब हे मरुदेशीय वीर ! (तू) महा ध्यानी प्राचीन वंदनीय सिद्ध के समान शोभा पाता है।

जागीरें आदि देना ही रसायन की वृद्धि करना है. एक ही (वीर) रंग में रंगा रहने से तू निर्लिप्त आत्मा है। (इस प्रकार) हे दूसरे ही अक्षयसिंह के तुल्य, नखत्रधारी वीर ! तू तेजस्वी योद्धाओं (शिष्यों) के बीच रहकर अखाड़ाधारी पुराना सिद्ध है।

तेरा तलवार पकड़ना ही मंत्रित कंकरी लेकर फेंकना है, रण-वाद्य ही नाद है। हे सांवलसिंह के पौत्र (या वंशज) ! तू वीरों की टेक रखने वाला पुराना सिद्ध है। तेरे योग-बल की सभी प्रशंसा करते हैं।

गजारोही सेनाओं का आ-आकर मिलना (एकत्रित करना) ही संतों की टोली का विचरण करना, शरीर पर कवच कसना ही कथा धारण करना है। शत्रुओं को (नष्ट करने के लिये) आदेश देना ही सुन्दर चर्चा है और हे राठौड़ वीर ! शत्रुओं पर घेरा डालना ही तेरे लिये धूनी तापना है।

बेराट-दुर्ग (वधेन या बदनोर दुर्ग) ही तेरे विचरण करने का स्थान (तपोभूमि) है, घोड़े पर सवार होना ही पद्मासन लगाना है, जिससे दुश्मनों की कुटियों (दुर्गों) में भय छा जाता है। हे पुराने सिद्ध-रूप राठौड़ ! कौन ऐसा है, जो तुझसे वाद (विवाद) छेड़े ?

उपदेश देते हुए तूने जिसके मस्तक पर हाथ रख दिया, वह न औरों के सामने झुकता है और नहीं उनका विश्वास ही करता है। (इस

लिये) हे दूसरे ही जयमल ! तू सद्गुरु के समान कान में फूंक मारने वाला महान तपधारी सिद्ध मालूम होता है।

जैता राठौड़ (जैतसिंह)

[३१] गीत

समर पाय रा रूप गज बांध रा भरखसा,
भीम खल गात रा करण भैता ।
सोहिया मार आचार समराथ रा,
जोवपुर नाथ रा मार जैता ॥१॥

साकुरां कसे सिलहां मढ़ां साख रां,
धू खलां विछेड़ण नेम धारू ।
क्रीत रा दिगपती प्रथी ऊपर कथां,
मुरधरा पती रा नेन मारू ॥२॥

चकांबंध रावतां जैंगा हमला रचग,
सत्राँ थट चलावण माग सरगां ।
सुतन कुसलेस आचार खग सोहिया,
कोट नव नाथ रा मार करगां ॥३॥

बगल छाकां धरण धनो चांपा विया,
खगां खल धूणा जैंगा अखड़ैत ।
नटी गल हार पनगेस बाँवी जही,
जही जोधाण रा भार भुज जैत ॥४॥

(रचयिता:— अज्ञात)

मेरे मारग जिकण तेजसी मालियो,
सुने मारग जिको आज मिलियो ॥२॥

परस हर सरस अगजीत बळ पावियो,
पाय तेजल सुक्रज राण पेले ।
चूर अरि घाट कुनघाट जल चढ़ावे,
गयो अत तेजसी तखे गेले ॥३॥

जीव जीवण करे घरे जावै जिको,
मूफ मरणै मँगल चवे ससमंथ ।
सुरधरा धणी छल अखी चड मालियो,
पोतरो वडा दादा तखे पंथ ॥४॥

माफियाँ जोध अग्रसांण थवसाण सिध
कुसल राह किया करण कूपेडा ।
भिद मँडल-माण रहिमांण सू जाप भिळ,
पह विकट सूरमां तणा पेडा ॥५॥

(रचयिता— अज्ञात)

अर्थः—तेजसिंह की कला धारण करने वाला (तेजसिंह का वंशज) जोधसिंह, योद्धाओं से कहता है कि, (आज तो) घर में ही आ बीती है (विपत्तियों से घेरा जाने पर घर आपत्तिग्रस्त है) (वास्तव में) इससे बढ़ कर और कौन-सा युद्ध हो सकता है ? (जो कि दुश्मन स्वयं ही युद्ध के लिये आगये हैं) । हमारे वंश में युद्ध ही एक ऐसा मार्ग माना गया है, जिस पर चलने से स्वर्ग को जीत कर सूर्य-मण्डल को भेद सकते हैं ।

गोधा का पुत्र (या वंशज) जोधा के घेरे जाने पर लाखों वीरों के समूह की ओर (जोधा) बढ़कर यह सूर्य-मण्डल की ओर जाने वाली राह

... कि, मेरे पूर्वज तेजसिंह मर कर जिस मार्ग से प्रसन्न होते हुए चले थे, उसी युद्ध-मार्ग पर विचरण करने का आज मुझे अवसर मिला है।

विजयी फरसाधारी (परशुराम) सा बल प्राप्त कर रण की सहायता करते हुए जोधसिंह के पूर्वज तेजसिंह ने जिस प्रकार (सूर्य-मण्डल के) मार्ग पर पैर रखा, उसी तरह दुश्मनों को मौत के घाट उतारता हुआ जोधसिंह भी मर कर उसी मार्ग से स्वर्ग से भी ऊपर (सूर्य मण्डल) पहुँचा।

"जो अपने प्राणों की रक्षा चाहता हो (कायर हो), वही घर की ओर कदम रखे। मेरा तो मरने में ही मंगल है" यह कहता हुआ मार-वाड़ राजवंशी शक्तिशाली वीर (जोधा), सेना की सहायता कर प्रसन्नता पूर्वक घोड़े पर चढ़ा और अपने प्रपितामह के रास्ते (युद्ध-मार्ग) पर चल पड़ा (तथा उसी के समान मृत्यु को प्राप्त हुआ)।

सजग वीर जोधसिंह मरने के लिए तैयार हुआ और जिन्होंने प्राण-रक्षा चाही, उन्होंने कायरता का रास्ता अपनाया। परन्तु वीर (जोधा) तो बहादुरों के पथ पर ही चला और सूर्य मण्डल से (भी) ऊपर पहुँच कर ईश्वर की ज्योति में जा मिला।

राठौड़ दला (दलसिंह)

[३४] गीत

घर ढोल न बाजै हुवै न धमचक,
झाट सस्त्रां नह लागां झोड़ ।
दलियो मारण हार दवां रो
राड़ीगार मुवो राठौड़ ॥१॥

बीजल झल दल न हूकल, वीरां
खलतल पंडल न पड़े खही ।

लसकर पसर फरै घर लूसी,
नर कांकल तो तको नहीं ॥२॥
अटघर हार डकार न जोगण,
ग्रीध अहार न गूद गल ।
बियनो घर तणे विरदाई,
दाई भांजण हार दल ॥३॥
घर कोय तपत सुखी नह धारां,
वर नहँ अछरां दियै विनोद ।
कोगत सुरां न असुरा कांकल,
मारू नहीं स पूरे मोद ॥४॥
साल भगो नौरंग-साचां रो,
थर हाडां रो जीव थपी ।
फरो नचीत हमै गज फौजा,
गज फोजां मारखो गयी ॥५॥
सबळो काम पड़्यो सुरगापुर,
धूबिया दाणव मछर घर ।
तण काजै दोलो तेंड़वियो,
हरवल रारखण काज हर ॥६॥
मे पड़िया राकस मेचकिया,
चढे न कोई अदल चढे ।
सारे काम दलो नवसहसो,
राम नचीतो थको रहे ॥७॥

(रचयिता:— अज्ञात)

अर्थः—आज रणवाद्य नहीं बजते, दलबल नहीं है शत्रुओं के साथ खड्गाघात का वादविवाद भी सुनाई नहीं देता है। क्योंकि सेना को नष्ट करने वाला लड़ाकू वीर राठोड़ दलसिंह अब संसार में नहीं रहा है।

तलवारें नहीं चमकती हैं, वीरों की हुँकार नहीं होरही है, शत्रु धराशायी होते नहीं दीख रहे हैं क्यों कि (राठोड़ दलसिंह) का कङ्काल (शव) (रण में) पड़ा दिखाई देता है, परन्तु अब वह (जीवित रूप में) नहीं रहा है। भले ही (सब की सब) सेना इस सुविस्तृत पृथ्वी पर अधिकार करे।

शिवजी मुंडमाला नहीं पिरो रहे हैं, रक्त से तृप्त होकर योगिनियां नहीं डकार रही हैं, गिद्धों को भी गूदे का आहार नहीं मिल रहा है; क्योंकि दाव देने वालों (दुश्मनों) की सेना को नष्ट करने वाला तथा विरुदधारी शूरसिंह का पुत्र आज संसार में नहीं रहा है।

(आमोद) प्रमोद की पूर्ति करने वाले मरुदेशीय वीर के संसार से उठ जाने पर आज न तो चकाचौंध करने वाली तलवार दिखाई देरही है, न अप्सराओं में वीर-वरण का विनोद ही रहा है, देवताओं को वीर-कौतुक नहीं दिखाई देता और शत्रुओं के (रणभूमि में पड़े हुए) शव भी नहीं दीख रहे हैं।

कवि कहता है, कि—आज औरंगजेब को चुभने वाला शल्य टूट गया है, हाड़े क्षत्रियों के हृदय में स्थिरता आगई है, गजारोही सेनायें निःशंक फिरती रहें, क्योंकि गजारोही सेना का संहारक अब (संसार में) नहीं है।

(राठोड़ दलसिंह के मर जाने पर) ऐसा जान पड़ता है कि मस्त होकर दानवों ने देवताओं पर भयंकर आक्रमण किया है। इसीलिये दलसिंह के लिये उपयुक्त कार्य आजाने पर शिव ने अपनी सेना के हरावल का नेतृत्व करने के लिये स्वर्ग में बुला लिया है

स्वर्ग में (राठोड़ दलसिंह के) जाते ही दानव डर कर चकित हो गये हैं। वहां न तो कोई उसका सामना ही कर सका और न कोई विपरीत

यही कारण था कि मेड़ता के रणक्षेत्र में इस राठौड़ वीर का मस्तक टुकड़े २ होकर ही शिव को मिला। शिव ने भी उन्हें चुन २ कर नगों की तरह पिरोलिया। वह (पिरोये हुए टुकड़े) गिरिजापति (शिव) के लिये शृंगार (मुंड-माला) न बन कर गिरिजा के लिये चन्द्रहार बना।

धीरतसिंह राठौड़

[३६] गीत

दुहा दीजिये वड़ाळे राग रावतां तयारी दीसे,
तुरंगां पाखरां पड़े लीजिये अगल्ल।
मोटी पणो ऊधड़े भमक्के आग चखां माही,
क्यांहीकां अमागी आज भीड़ियो कगल्ल ॥१॥

मिधुरां टकोरां वाज साखरा कड़च्छे सारा,
मांड़जे तुरंगां पीठि केजमां मरद।
वैरियां चठी रा लेख पूरा हुवा सही वातां,
जाणियो जरांही भूरे भीड़ियो जाद ॥२॥

सोर गोळा नाळियां जमाजां पीठ भार सोहे,
भिड़ज्जां सुंडाळा ठहे भड़ा थट्ट मीर।
बलाकारी काळ रूपी पांखियो सनाह चीड़े,
पांखिरो अरीदां माथे रावाखियो धीर ॥३॥

मड़ां तणा मेळिया चक्कारा आग जाग भालां,
धीह बजे त्रांबागळां ऊलटे दिड़ंग।
छड़मड़ां टालदां आपड़ां छड़ां छड़ां खूर,
वेरी हरा माथे खड़े ऊधड़ा विड़ंग ॥४॥

बंदूकां मुराड़ा आगि सावळां भळक्के धूंग,
साकुरां उलट्टे रजी दांत्रियौ सरंग ।
हपुकारे लड़ाकां अजानबाह खळा बोळ,
अमरेस वाळे वेर लूखियो अभंग ॥५॥

ताखड़ां धुवाड़े गांव चापड़े कंवाड़े तोड़े,
घोळे दीह सोर भाळ्यां धुंवा घोर धार ।
गोळा त्राड़ केरां यराड़ हुवे फूट गजां,
वीछड़े जत्राड़ रूकां कटारां बोमार ॥६॥

मारियो दोखियो मांन दूजौ कोन धारे दावौ,
तैं कियो प्रवाड़ो धात्रो समंदां तीरंम ।
महलां जरोखां आइ चोसरां डुलावे मारू,
वधायो मोतियां गायो बजाइ वीरंम ॥७॥

(रचयिता.— बलता खड़िया)

अर्थः— म रू तथा सिंधु राग गायकों द्वारा गाया जा रहा है, पावं पद-धारी (सामंत) योद्धा सुसज्जित हो रहे हैं, घोड़ों पर पाखरें कसी जा रही हैं, हाथ में तिधारा माला लेकर वीर (धीरतसिंह) डटा हुआ है. धीरत-सिंह के नेत्रों से आग बरस रही है, शौर्य प्रकट हो रहा है, (शरीर पर) कवच कसे जा रहे हैं । इससे यही स्पष्ट होता है, कि आज किसी शत्रु का दुर्भाग्य है ।

गज घटायें बज रही हैं, 'सगोत्रीय वीर युद्ध के लिये आतुर हो रहे हैं, पराक्रमी वीर घोड़ों पर पाखरें डाले हुए हैं, युवक वीर (धीरतसिंह) ने स्वयं अपना घोड़ा सजा रखा है । इससे यह निश्चित है, कि शत्रुओं के भाल-स्थल पर लिखे गये अंक प्रायः नष्ट हो चुके हैं (उनकी आयुष्य समाप्त होने में है) ।

बारूद, गोले और छोटी तोपें ऊँटों पर लादी जा रही हैं, हाथियों और घोड़ों पर वीर समूह चढ़ा हुआ है, काल एवं सपक्ष-सर्प स्वरूप पराक्रमी धीरतसिंह कवचकसे हुए है। इस प्रकार अरुण नेत्र वाला यह वीर क्रोध कर शत्रुओं पर बढ़ रहा है।

(उपरोक्त तैयारी के बाद युद्ध छेड़ देने पर) योद्धागण चक्राकृति दौड़ने वाले घोड़ों की रासें ऐंचकर बढ़ा रहे हैं, भालों से आग चमक रही है, रणवाद्य अविराम बज रहे हैं, वाराहरूपी वीर उलट पड़े हैं, ढालें (परस्पर टक्करें खाकर) खड़बड़ा उठी हैं, खूंदते हुए खरखुर बज रहे हैं। इस प्रकार वीर (धीरतसिंह) आडंबर के साथ अपना ऊर्ध्वकाय घोड़ा दुश्मनों पर बढ़ा रहा है।

बन्दूकों पर आग लग रही है, भालों की अणियों से चिनगारियां झड़ रही हैं, घोड़ों के खुरों से रज उड़ कर आकाश में छा गई है, युद्धरत वीरों को 'आजानु बाहु', एवं 'शत्रुओं को नष्ट करने वाले' (आदि प्रोत्साहक शब्द) कह कर उत्साहित किये जा रहे हैं! इस प्रकार अमरसिंह का पुत्र (वंशज धीरतसिंह) अपना चतुरंग वैर दुश्मनों के प्रति उगल रहा है।

चंगे वीर, (दुश्मनों को) प्रत्यक्ष रूप में ललकार कर किवाड़ों को तोड़ शत्रुओं के गांवों में मारधाड़ कर रहे हैं, दिन में तुपक आदि का धुंआ छा रहा है (जिससे रात मालूम होती है), तोपों के गोलों एवं तीरों की मार से हाथियों के शरीर फूट रहे हैं (इसी प्रकार) तलवार और कटार के वार से दुश्मनों के जबड़े चिर रहे हैं।

इस प्रकार आक्रमण कर धीरतसिंह ने विरोधी मानसिंह को नष्ट कर दिया। अब ऐसा अन्य कौन है, जो इस (धीरतसिंह पर) दाव लगाये? हे वीर! तूने अपनी ख्याति समुद्रपार तक प्रसिद्ध करदी है। (इस तरह) मरुदेशीय वीर (धीरतसिंह) विजय प्राप्त कर महलों के झरोखे में बैठकर चारों ओर से चमर ढुलवा रहा है और मानों दूसरे ही वीरमदेव के समान लगता है। उसके विजयोपलक्ष में मोतियों की थालियां भर २ कर मांगलिक गानें गाये जारहे हैं।

नाहरखान राठौड़

[२७] गीत

सीमाड़ाँ साड खयिये संमहर,
वंस कमधजाँ वधारण वांन ।
दींपे विरद रिणमलां दीपक,
खवे तुहारे नाहरखान ॥१॥

कित अपारेह ऊजला कमधज,
अे विधि वीयाँ न हाने वाद ।
भार सुरवरा तणा सोहे भुजि,
मछर अरेहण महण मजाद ॥२॥

पाँरिस वडिम सामिध्रम अणपल,
पाट सु छलि कोटां रखपाल ।
अइपां काजि राजि अरधीजे,
खत्र ताहरां वियां खेमाल ॥३॥

मांडण दलां अभिनमां मांडण,
मारू आगलि निभै मणां ।
भ्रागै कुळ मारग ऊधरिया,
तो मरीमे राज धर तणां ॥४॥

(रच० नरहरदास बारहठ)

अर्थः— हे नाहरखान ! तू अपनी राज-सीमा पर रहने वाले वृषभतुल्य वीरों को नष्ट कर देने वाला एवं राठौड़ कुल की शोभा बढ़ाने वाला है । हे रणमल के वंश-प्रदीप ! (संसार में) जितने भी विरुद हैं, वे सब तेरे कंधो पर शोभा पाते हैं ।

हे राठौड़ वीर ! असीम कीर्ति एवं पवित्रता इन दो बातों में तेरी कोई भी समानता नहीं कर सकता। तुझ में असीम मस्ती है, फिर भी समुद्र की तरह तू मर्यादित है। इसीलिये मरुदेश का राज्य-भार तेरी भुजाओं पर निर्भर है।

हे दूसरे ही खेमसिंह-तुल्य वीर ! तेरा पुरुषार्थ महान है। तू स्वामी-धर्म का पालन विशेष रूप से करने वाला है। राज्य-सिंहासन एवं दुर्ग का रक्षक (भा) तू ही है। युद्ध के समय तेरा स्वामी तेरे क्षत्रियत्व का सम्मान करता है।

हे नये मॉडा (व्यक्ति विशेष) ! तू सेनाओं की शोभा के तुल्य है। मरु-नरेश के समीप तू ही एक निर्भय योद्धा है। हे राजसिंह के पुत्र (या वंशज) ! तेरे समान वीर ही आदिकाल से अपने कुल-मार्ग का उद्धार करते आये हैं।

प्रतापसिंह राठौड़ (खेरवा)

[८] गीत

निपट भोकिया परी रथ घरहरी नाळियां,
ऊधरी रीस वागां असारा।
जूंग साकुर करी थरी पड़ तरी जिम,
थरहरी ईसरी चोळ धारा ॥१॥

वाजिया ठहर रूकां कहर वेखवा
पड़े मेळां रुधर महा पाणी।
मोरचे पता रे पहर समहर मचे,
वही आगे सहर गहर वाणी ॥२॥

जमी धड़धड़ थरड़ गेम चड़चड़ जुड़े,
खाग झड़झड़ उरड़ वीर खिलता।

पटाळां जूंग लादे नरां गरां पड़,
श्रोण धारां दड़ड़ गड़ड़ सिलता ॥३॥

काटिया भीम रे नदी दोळा किलम,
तटा वण कराड़ा पूर तांई ।

किलोळां सबोलां पंखि भारा करे,
मगर ले हिलोला रुधर मांही ॥४॥

(रचयिता:- खड़िया बखतराम)

अर्थ:— जब क्रुद्ध होते हुए प्रताप ने रास ऐंच कर घोड़ा सवेग बढ़ाया, तब आग्नेयास्त्र (तोप, बुदक आदि) की आवाज होने लगी, अप्सराओं के विमान नीचे उतरते हुए दिखाई देने लगे, कटे हुए हाथी, घोड़े एवं शत्रु-समूह रक्त-प्रवाह में (नाव की तरह) तैरने लगे तथा रक्त से तर हुई रण-चंडी कांपने* लगी ।

रण-स्थल में जिस मोरचे (मुहाने) पर वीर प्रताप डटा हुआ था, वहां एक पहर तक युद्ध छिड़ा, भीषण तलवारें खनखनाने लगी और जल-वृष्टि के समान यवन-अंगों से रुधिर बरसने लगा जिससे हाथी पर्वत-शिखर के समान नदी में बहते हुए दिखाई देने लगे ।

कुपित होकर जब वह (वीर प्रताप) भिड़ गया, तथा पृथ्वी धड़-धड़ाती हुई फटने लगी, शस्त्रों की वर्षा से शत्रु कटने लगे तथा (कट २ कर) गिरते हुए हाथी ढहते हुए पर्वतों की तरह मनुष्यों को दिखाई देने लगे । रक्त-प्रवाह (वहां) इतना हुआ कि नदी के समान दिखाई देने लगा ।

.. भीमसिंह के पुत्र (प्रतापसिंह) ने, उस नदी के समीप ही यवनों को काट दिया, तब उस (नदी) के तट शव से पट गये । (वहां) एक

टिप्पणी:—* स्नानातिरेक से शरीर शीत से कांपने लगता है, इसी भाव का यहा प्रदर्शन है ।

प्रकार से रक्त का बांध बन गया, जिसमें बोलते हुए पक्षी क्रीड़ा करने लगे और मगर डुबकियां लगाने लगे।

प्रतापसिंह राठौड़

गीत [२६]

किरम घड़ा रँग मोद छक छेल पातल कमँध
निहँग आरोह चन्द्रहास नागे।
वोह झोका अड़े छोह धारा उभे,
लोह मिलतां भुजां आम लागे ॥१॥
पँजां खग नाटरा गेत खेले प्रगट,
थाट खळ घाट रा वयँग थाये।
भीम रा पाट रा थंभ पारथ भुजां,
खाटरा उरस मों मचक खाये ॥२॥
नयण रँग जोम छिलि गयण पोरस निडर,
वयण रँग रोस समहर विरोधा।
दूसरा रयण इजदंड धारा दुगम,
जई ओपस गयण रार जोधा ॥३॥
वृज जिम पवा सिणगार कुळ मोहो तणा,
असुर खग वोहो तणा जीत आवे।
भुजां छक छोह तणा वधाग जिके मद
पोहो तणा वधारा भलां पावे ॥४॥

(र० कविया करणीदान)

अर्थः— हे प्रतापसिंह राठौड़ ! तू ही एक ऐसा है जो यवन-सेना से युद्ध-क्रीड़ा करने के मोह में फसा रहता है । तू हमेशा घोड़े पर सवार रहता है, तेरी तलवार (भी) म्यान से बाहर ही रहती है। जब तू युद्ध के लिये उठ खड़ा होता है, तब उत्साहित होकर झूमने लगता है और शत्रु से शत्रु मिलते ही तेरी भुजायें आकाश को छू लेती हैं ।

हे भीमसिंह के सिंहासन के अधिकारी ! तेरे हाथ जब खड्गाघात का कौतुक करते हैं, तब आडंबर रखने वाले शत्रु भी टुकड़े २ होते दिखाई देने लगते हैं । तू स्तंभ स्वरूप वीर है । तेरी भुजायें पार्थ की भुजाओं के समान हैं । हे नाटे वीर ! युद्ध के समय तू आकाश से टक्कर खाने लगता है ।

हे दूसरे ही वीर रयणसिंह ! तेरे नेत्र जोश के कारण रंगे रहते हैं । निर्भयता एवं पुरुषार्थ से तेरी शोभा (मस्त) हाथी के समान दिखाई देती है । युद्ध के समय विरोधियों के साथ तेरे वचनों में रोष का रंग चढ़ा रहता है । हे राव जोधा सदृश वीर ! तेरे अदम्य भुजदण्ड विजय-गर्व से पूर्ण होकर, नभ मण्डल को उलट देने की शक्ति रखते हैं ।

हे प्रतापसिंह ! खड्गधारी असंख्य यवन योद्धाओं पर विजय पाने वाले और उत्साह से भरे हुए अपनी भुजाओं को बढ़ाने वाले कुल (वंश) के शृंगार, जो वीर होते हैं, वे ही तेरे समान सम्मान और जागीर में वृद्धि कर पाते हैं ।

महाराज बलवंतसिंह रतलाम

गीत [४०]

करपण नृप रहे तांकता केही,
पौह सांसे हाकता पड़े ।
कीरत राह डाकता काळी,
खेदेचा आखता खड़े ॥१॥

वीजा पदम धनो डाका वज,
हरवल अणी कडाका हूँव।
पण रीझाय वड़ा पेंडाका,
पेंडाका हाकले पलू ंव ॥२॥
देखत रहे घटे छक दूजां,
वाक फटे सुणतां बांखाण।
मोजां दियण अटपटै मारग,
कमँधज तू दपटे केकाण ॥३॥
सुत परवत वीकम क्रन सागे,
डारण पुळ वागे जस डाक।
लोभी दुजो जोड़ नहँ लागे,
आगे कुण काडे एराक ॥४॥
हद सुदतार अरोड़ा हिंद,
घोड़ा भड़ झोकाद सवार।
घाले पंथ दान रे घोड़ा,
आप जसा थोड़ा असवार ॥५
ले जस कमँध पियागां लागा,
आसत वेग अयागा आन।
वहवे सदा उजाळी वागां,
घावा दत भागां धजराज ॥६॥

(रघ० अमात)

अर्थ:— कितने ही कृपण नरेश, देखते, ताकते) ही रह गये और कई यश-पथ पर घोड़ा बढ़ाते हुए भी दुःखी दिखलाई दे रहे हैं। वीर

खेड़ेचा (राठौड़) कूदते हुए घोड़े को (यश-पथ पर) तेजी से बढ़ाता रहता है (उसकी कोई बराबरी नहीं कर सकते)।

हे बलवन्तसिंह ! तू दूसरा ही पद्मसिंह है । तुझे धन्य है । तू डंके की चोट साहस पूर्वक पूर्वजों की तरह प्रसन्नता से प्रतिज्ञा-पालन करता हुआ (यश-पथ पर) हरावल में (सबसे आगे) घोड़े को ललकार कर दौड़ाता रहता है ।

तेरी प्रशंसा सुनकर सब उत्साह हीन हो आश्चर्य से देखते रहजाते है । हे कमधज वीर ! तूही एक ऐसा वीर है, जो दान के अटपटे मार्ग पर घोड़ा दौड़ाता (? पटाता) रहता है ?

हे पर्वतसिंह के पुत्र ! (वास्तव में) तू विक्रम और कर्ण है । ऐसे कठिन समय में तेरे यश का नक्कारा बजता रहता है । तेरे समान अन्य ऐसा कौन स्वार्थी (यश प्रेमी) है, जो (यश-पथ पर) अपना घोड़ा तुझसे भी आगे निकाल ले ?

हे हिंदूवीर ! तू उदारता की सीमा है । तुझे इस विषय में कोई रोक नहीं सकता । तूही एक दान मार्ग पर घोड़ा बढ़ाने वाला एवं झूमता हुआ (मस्ताना) सवार है । तेरे समान अन्य कोई विरला ही सवार होगा ।

हे कमधज वीर ! तू यश प्राप्त कर उत्साह मग्न होगया है, तू आक्रमण करने वालों की तरह रास को बढ़ाकर (ढीली देकर) दान-मार्ग पर घोड़ा दौड़ाता रहता है । (खूब दान करता है)।

महाराजा बहादुरसिंह (किशनगढ़)

गीत [४१]

महा ग्राह जोधार ताता तुरँग मेल्हिया,
खाग झट विकट अथभूत खेली
तूं हुवो त्रपत जोधाण रा तखत रूज,
पखतसी तणो रिण पखत बेली ॥१॥

पड़े भड़ बाज गजराज घर पाधरा,
अड़े जुध लाज रा मूर एहा।
कमँध सिरताज दळ आज चढिया कहे,
जुड़े जस काज महराज जेहा ॥२॥

सुतन राजान बहादर अभँग सूर गुर
बीर छक चाळ अँग छक बराथी।
विहर कीधी फते जोध रिण बांकड़ा,
सांकड़ा बखत में होय साथी ॥३॥

पळा सिर प्रवाड़ा कीध ते एहड़ा,
केहड़ा कहूँ भद अकट काटै।
बीर वर कमँध कादी तणा बेहड़ा,
बँधव तो जेहड़ा भीड़ बांटै ॥४॥

(र० मथेन मोखचन्द)

अर्थः—हे महाबाहु वीर ! तू युद्ध में अपना घोड़ा सवेग बढ़ाकर अद्भुत खड्गाघात करता हुआ जोधपुर सिंहासन के लिये भरतसिंह का सहायक बना।

हे राठौड़ों के सिरताज महाराजा ! जब युद्ध की मर्यादा रखने वाले वीर अड़जाते हैं और हाथी, घोड़े एवं नर का संहार करने लगते हैं तथा विपक्षी पीछे पड़ जाते हैं, तब तेरे जैसे वीर ही उनसे भिड़ते हैं।

हे राजसिंह के सुपुत्र अभंग महान वीर ! बांके राठौड़ बहादुर सिंह !! वीरता में छक कर तूने उन्मत्त सैन्य समूह को काट दिया और विजय प्राप्त कर आपत्ति के समय (भरतसिंह का) साथ दिया।

हे वीर ! पृथ्वी पर तूने जो ख्याति प्राप्त की है, उन अच्छिद्र विरुदों का वर्णन हम कहां तक करें ? हे कमधज ! तू कालिका का कुम्भ समान है। तुझ जैसे भाई ही अपने बन्धुओं का, आपत्ति के समय साथ देते हैं।

महाराजा बहादुरसिंह

गीत [४२]

लेवे भार तेगां पेला बाहाघ(रे)स महा लोभी,
वा नी धापे नही जेवे सतारां वा ठोड़ ।
रीझां बाज आछा देवे ना कहवे न गूंगा राजा,
रोलां पान पाछा न दे पांगलां राठौड़ ॥१२

सारी जमी दाटवे लालची आद'बंचे सदा,
धू सत्रा तवाई लाखां फते पाई धींग ।
माखवे अकत्थां ना टारिडां आला भलो भाई,
माडी जंगां अचालां विजाई मानसींग ॥२॥

भुजां बल खाटवे स्वारथी खाग झाले भूरो,
साले पाव साह्नां मिंवां दाटवे समाथ ।
नाकारे न चाले जीहां पाले, रोर नीपणा चे,
पीठांण मारांथां न हाले प्रथीनाथ ॥३॥

जुधा जीत बाज राजा देवाळ भोगणा जमी
आठां दिसां अवाका सौ गुणा आपताप ।
हुलामी राजान नंद पांत्रहुंगे गुणा हूंता,
प्रथीनाथ चोगुणा हूँ चोगुणा प्रताप ।'४॥

(रचयिताः— मेहड़ चावंडदान)

अर्थः— हे महाराजा बहादुरसिंह ! आप बड़े स्वार्थी मालूम होते हैं, तब ही तो पराये युद्ध का भार ले 'सतारे' तक अधिकार कर लेने पर भी

तृप्त नहीं होते। (इस उपरांत) आप मूक भी हैं, क्योंकि उपहार में अच्छे अच्छे घोड़े देते समय इनकार नहीं करते। (इसी तरह) आप पंगु भी हैं, जब कि युद्ध में पीछे कदम नहीं देते।

हे दूसरे मानसिंह-तुल्य नरेश! आप युद्ध में दुश्मनों को दबाकर विजय पाते हो और समस्त पृथ्वी को अधिकार में कर लेते हो, फिर भी तृप्त नहीं होते, अतः आप स्वार्थी है। (उपहार स्वरूप) घोड़े देते हुए ना ही नहीं करते। अतः मूक हो। (इसी प्रकार) युद्ध में अडिग रहने से चलने में अशक्त माने जाते हो।

हे युवक नरेश्वर! बादशाहों के मनमें खटकते हुए आप सिंह-रूपी वीरों को दबा देते हो और अपने बाहु-बल से तलवार द्वारा पृथ्वी को अधिकृत करते हुए हटते नहीं (कहना होगा) इस विषय में आप पक्के लालची हैं। दान देते समय ना नहीं करते, उस समय आपकी जीभ हिलती नहीं। युद्ध में पीठ देकर चलते नहीं, (इससे जान पड़ता है) तब तुम चलने में शक्ति नहीं रखते।

हे पृथ्वी पति! आप युद्ध में अडिग रहकर आठों दिशाओं को जीत लेते हो। अवाक् रहकर दान में घोड़े दे देते हो। मैं तीनों गुणा (अधिक भय फैलाकर पृथ्वीका उपभोग करते हो, इन तीनों (पृथ्वी का स्वार्थ, दान देते समय निषेध नहीं करना एवं युद्ध में अडिग होकर रहना) गुणों के कारण हे राजसिंह के युद्धत्व प्रिय पुत्र! तुम्हारा प्रताप (पृथ्वी पर) सोलहों गुणा प्रसारित होता रहता है।

भगवानदास राठौड़

गीत [४३]

घडिम वीटीया वरियांम वडाळा,
बंसि बधारण बाना।
सोहै तूझ भुजे नवसहसा,
भाखी त्रिद भगवांना ॥१॥

मेर अजाद सुरवरा मंडण,

मारू राव वड मोजां

समहर वरण मनोहर संभ्रम,

कटकां थंम कनोजा ॥२॥

वेढुक धणी हुवै वीरा रसी,

वाघारे जुध वारो ।

दल रखपाल कल्याण दूसरा,

भांजेवा गज मारो ॥३॥

प्रीति अडोल पालगर पात्रां,

पौरिस वंश प्रमाणै ।

ऊभी तांण लाख दळ आगल,

वीरत जगत वखांणै ॥४॥

(रच०:- बारहठ नरहरदास)

अर्थः— हे महेशोत्र वीर भगवानदास ! इस समय बड़े २ सामंतों में एक मात्र तू ही बड़प्पन रखने वाला है और वंश की शोभा बढ़ाने वाला है। (वास्त में) तेरी भुजाओं पर ही विशिष्ट विरुद शोभित होते हैं

हे मनोहरसिंह के वंशज राठौड़वीर ! तू मर्यादा म सुमेरु पर्वत के समान अडिग वीर है। मरुदेश की शोभा स्वरूप विरोध प्रहार एवं कन्नोज-राजवंशी राठोड़-सेना का स्तंभ भी तू ही है।

हे दूसरे वीर कल्याणदास ! युद्ध के समय तुममें वीर रस विशेष झलकता हुआ दिखाई देता है और शत्रु-सेना को एवं बड़े २ हाथियों को नष्ट कर अपनी सेना का रक्षक बन जाता है।

निश्चय प्रीति के साथ कवियों का पोषण करने वाले हे वीर! तेरा पुरुषार्थ अपने वंश के समान ही है। असंख्य सैनिकों के सामने तू अपना हठ निभाता है, इसलिये तेरी वीरताकी प्रशंसा सारा संसार करता रहता है।

महेशदास राठौड़

[४४] गीत

शोभा सालुले, सतारा वाला धूं कले मेड़ता सीस,
दगे तोपां वलावली डांकियो दनेस।
भड़ाकां हड़ाकां हाका मेण मेल लोक भागो,
मारूराव आम लागो जे वेला माहेस ॥१॥
धराची लोपतां लाज सांमध्रमो भुजां धार,
यापुकारे मार्या भड़ां बोलतो दुवाह।
दखे गंम आचरे थाचरे मही खागां दपी,
ऊथरे चाचरे वाला कूंपा वाह वाह ॥२॥
फूटो आसमांन कनां सापंद्र आठमो फटो,
वछूटो समंद्र काली ऊपरा वनैत।
तसो रामचंद्र बांण गेणांग नखत्र तूटो,
वज्र छूटो अंद्र रो क दला रो वांनेत ॥३॥
खूंदां दंडा झेड़तो खेड़तो थाज अगी गांमा,
दोयी रेण रेड़तो झेड़तो रूकां दार।
पलटे कूं मेड़तो माहेस जैतै ऊभां पगां,
रूपी गड़ा उबेड़तो वागो गादेदार ॥४॥

घरे सूरां अच्छरां के होकवे डाकरे वीर,
खवालां धोकरे लोहड़ां पाटीरोप।
रंभ फूले वरैवा मारू आई लूंब रयां,
सार धारां जड़ै कूंपो उजालि यासोप ॥५॥

सीसं खगां भंडंतो पडंतो मेल लियो (शंभु),
माला पोय कंठ सु अडं घमोड़।
एला सारी ऊपरा आदीत जुनाम ऊगो,
साम री जोत में पुगो माहेस राठौड़ ॥६॥

(रचयिता:— अज्ञात)

अर्थ:— सतारे के सूबे जब लड़ने के लिये मेड़ता पर उतरे, तब तोपों के दागे जाने से (धुंवें से) सूर्य छिप गया। आग्नेयास्त्र की ध्वनि तथा वीरों की हुँकार सुन कर जनता भागने लगी। यह देख मरुदेशीय वीर महेशदास ऊँचा हो आकाश छूने लगा।

जब पृथ्वी की लज्जा जाती हुई देखी तो कूंपा के वंशज ने स्वामि-धर्म का भार भुजाओं पर धारण किया और अपने बन्धुओं को उत्साह-वाक्य कहने लगा। बाहु पसार कर सामंतों से मिलने लगा, इस व्यवहार से वह वीर रामचन्द्र के समान दिखाई दिया। (बाद में) उसकी तलवार युद्ध में चमकने लगी। यह देख लोग उस ऊँचे मस्तक वाले वीर को सराहने लगे।

दल्ला का यह धनुर्धारी पुत्र (अथवा सेना का प्रसिद्ध धनुर्धारी वीर), शत्रुओं पर इस प्रकार पड़ा जैसे आसमान टूटा हो, आठवां समुद्र तूफान पर आया हो, काली नाग पर जय पाने के लिये गरुड़ झपटा हो, रामचन्द्र का अमोघ बाण छूटा हो, आकाश से नक्षत्र टूटा हो अथवा इन्द्र के वज्राघ का प्रहार हुआ हो।

इस प्रकार जब वीर महेशदास सेना के सामने घोड़ा बढ़ाता हुआ हाथियों की सूंडें काटने लगा, विपक्षि वीरों को खड्गाघात कर धराशायी करने लगा, तब यह देख कर दृढ़ विश्वास होगया, कि इस वीर के रहते मेड़ता, विपक्षियों के अधिकार में कभी नहीं जासकेगा।

जब अप्सरायें वीरों को वरने लगी थी और शूरवीर हुँकार कर रहे थे, तब उस महाशोय वीर का वरण करने के लिये उत्साहित हो स्वयं रंभा, रथ को नभ-मार्ग से उतार कर (वहां) आई। साथ ही उस वीर कूंपा के वंशज ने भी शस्त्रागार द्वारा कट कर अपने स्थान आसोप को उज्ज्वल कर दिया (मर गया)।

(इस प्रकार) महेशदास के मस्तक को, कटते ही शिव ने अपने हाथों में झेल लिया और मुंडमाला में पिरोकर कंठ में लेलिया (धारण कर लिया)। इस प्रकार वह सूर्यरूपी वयोवृद्ध वीर ईश्वर की ज्योति में समागया।

माधवदास राठौड़

गीत [५५]

फिरे देस दुरवेस वधि रेस दिल्लेस विनि,
समरथां वाहरां भुजां सारू।
सेन रा तिलक कलियांण रा मीवला,
मधकरा खरा पग मांडि मारू ॥१॥
बीजुलां वाह वधी खलां चहुवै वलां,
मीड़ पड़ती सबल दलां होइ भंग।
साख सिणगार गज भार भांजण समरि,
गाडि पग पनँग सिरि दूसरा गंग ॥२॥
माँझिया भार झूझार आमी मंडलि,
आझ तूं खाग धनि कुंभम जापै।

चापड़े खेसवण कालि दुयणा चलण,
मांडि पायालि अहिराउ माथै ॥३॥

हाक विपरीत होइ खेल अद्भुत हुवौ,
प्रसिद्ध तरवारि होई जगत प्राभी ।
हुवौ हरि जेति मिल अमर राइ-माल हर
मारि सबलां खलां खेति माका ॥४॥

(र०:- नरहरदास बारहठ)

अर्थः— हे राठौड़ वीर सेना-तिलक ! सिंह-समान, कल्याणदास के पुत्र माधव ! दिल्लीश्वर (बादशाह) के क्रुद्ध होजाने पर देश में (सर्वत्र) फकीर (यवन लोग) विचरण करने लग गये हैं । (अब यह) तेरे बाहु-बल पर ही युद्ध छिड़ा है, इसलिये तू दृढ़ चरण होकर खड़ा हो जा (हिंदुओं को एक मात्र तेरा ही भरोसा है) ।

हे दूसरे ही गांगा ! तू अपने वंश का शृंगार है तथा रण में गज-सेना को नष्ट करने वाला है । (अतः) आपत्ति आई हुई देख चारों ओर के शत्रुओंकी सशक्त सेनाको अपनी तलवारसे काट कर नष्ट करदे एवं अपने पैर शेषनाग के मस्तक पर जमा दे ।

हे वीर ! आज एकमात्र तू ही, मुख्य शत्रु-वीरों का नाशक है, तल-वार चलाने में भी तू बलवान है । इसलिये युद्ध आरंभ कर दे और फणीश के सिर पर दृढ़ चरण जमा शत्रुओं को ललकार कर रण-भूमि से भगा दे ।

इस प्रकार के उत्साह पूर्ण वाक्य सुनते हुए रणक्षेत्र के मुख्य विश्व-विजयी वीर रायमल के वंशज । या पौत्र) ने शत्रुओं से विरुद्ध हो हुंकार (गर्जन) के साथ खड्ग का अद्भुत खेल रच दिया । (तदनंतर वह) सबल शत्रुओं का नाश करता हुआ हरि की ज्योति में मिलकर अमर होगया ।

आगां सूं उड़ता भड़ आवे,
टूंड तणी लागां टकर ॥३॥
चाड़ धके ओभाड़ चलावो,
घल आड़ा ढूंढाड़ धर ।
फौजां फाड़ पाड़ भड़ फीटा,
कवलो आयो राड़ कर ॥४॥
मानसींघ वटतो मूंछारां,
कळ सारा आया कळराह ।
हिन्दूपत फगतो होकारा,
धारा पाड़ गयो वाराह ॥५॥
भँजियो साथ सकारी भूरे,
पँजियो नहँ ऊळजियो पांण ।
गिड़ राठोड़ सके कुण गँजियो,
जायर यह संजियो जोधांण ॥६॥
मडण हुआ लाख दळ भेळा,
गह साखी वागी गजर ।
आखी अणी भूख एकलं री
धणी नाथ राखी धजर ॥७॥

(रचयिता- महड़ महादान)

अर्थ—जब सेनाने चारों ओर से (मानसिंह को) घेर लिया, तब वह निर्भीक वाराह समान (मानसिंह), सोत्साह गर्जता (हुँकार करता) एवं उत्पात मचाता हुआ चला।

विषधारी वीर (भी) युद्धस्थल में आकर उस वीर का सामना नहीं कर सके। सेना में जो धनुर्धारी वीर थे, वे भौंचक्के होगये। विशेष खड्गाघात करते हुए वीर भी उस अकेले वाराह वीर (मानसिंह) को नहीं रोक सके।

उस वराह रूप (जोधपुर स्वामी) को रोकने के लिए तलवार उठा-कर आघात करने वाले कई वीर उसकी गर्जना (हुँकार) से, एवं कई टक्कर से जहाँ तहाँ बिखरते हुए दिखाई दिये।

रोकने वाले ढूंढाहड़े (कछवाहे) वीरों को आते कर उन पर रद-प्रहार (शस्त्राघात) करता, सेना को तितर बितर करता, विपक्षी योद्धाओं को लज्जित करता एवं उनसे लड़ता हुआ वराह रूप (राठौड़ नरेश मानसिंह) वीर लौट आया।

वह कवल (वराह) तुल्य हिन्दू नरेश वीर मानसिंह मूर्छों पर ताव देता हुआ, एवं सामना करने वाले सुसज्जित कछवाहे वीरों पर हुँकार करता हुआ पंक्तिबद्ध सेना को तोड़कर चला।

उस वराह के समान तरुण-वीर-राठौड़ ने, आक्रमण करने वाले शिकारियों के समूह को नष्ट कर दिया। शक्ति प्रदर्शित करता हुआ वह किसी के दाव में नहीं आया और न किसी से दबाया ही गया और अपने स्थान जोधपुर सकुशल पहुँच गया।

उस वीर से लड़ने के लिए अपार सेना एकत्रित हुई और रण-घाव बजे, जिसकी साक्षी दुर्ग देते हैं। (परन्तु) उस स्वच्छन्दगामी वाराह (राठौड़ वीर मानसिंह) की क्षुधा, सेना को नष्ट करने पर ही दूर हुई। इस प्रकार ईश्वर ने उस (मानसिंह) की शान रक्खी।

मोहकमसिंह राठौड़ (जोगा)

गीत– [४८]

तुरंगां पाखरा सिलाहां साखेतां,
राजिंद एहा बोल रहावे।

समान अपना भाला चमकाता हुआ यवनों का धन लूटकर उन्हें तलवार से नष्ट कर देता था।

शत्रु, मनचाहे सहायकों को अपने पक्ष में बुला लेते थे, फिर भी उन कवियों के पोषक झूमते हुए मस्ताने वीर (मोहकमसिंह) को धन्य है जो उनकी कुछ भी परवाह नहीं करता और ललकारता हुआ सेनाओं के बीच दुश्मनों का वित्त (लूटकर) उन्हीं के द्वारा ढुवाता था तथा उन्हें आगे कर घर लौट आता था।

राठौड़ रतनसिंह एवं चौहान सूजा

गीत-[५६]

चकट थट घममाण अंबागळ वाजिया,
गाजिया सोर हतनाळ गोळा।
कळा जिम अणखलो कमँद गोतां किया,
दमंगळ फरया फरँगाण दोळा ॥१॥

साम रो काम-खत्री ध्रम साजवा,
आप रतना कमल थरक ऊगो।
सीस पड़ियां सुमड़ आठ उर साजियां,
परी रथ चरे भ्रुगलोक पूगो ॥२॥

कलह सुण हाक चहुआण अद कोपियो,
दूठ जमराण सुरतेस दूजो।
अचाणक बीज आकास री आवियो,
सार जड़ बाहतो कुँवर सूजो ॥३॥

वादळां जेम घमसांण फोजां वणे,
धाड वज्जूजळा रुधर वरसे।

उसुर धड़ ऊपरे अणी घट आरसा,
दामणी सारसा सेल दरसे ॥४॥
पांण भाराथ रे घणा खल पालिया,
जवन री वास अलहूँत जावे ।
मीरजा हजारां लोह कर मारिया,
अजे तरवारियां वास आवे ॥५॥
उदाहर वात अखियात राखी अमर,
राव राणा दिया दात रूड़ा ।
अगँग दायेज जल घणा ऊनारिया,
चोल रंग बीबियाँ तणा चूड़ा ॥६॥

(रचयिता– अज्ञात)

अर्थ– सेनाओं में घनघोर रूप से रण-वाद्य बजने लगे, बारूद की ज्वाला के साथ २ तोपें गर्जती गोले बरसाने लगीं। उस समय अपने पूर्वज कल्याणसिंह के समान इस वीर राठौड़ ने अंग्रेजों से घिरने पर युद्ध किया। (अथवा) अपने पूर्व पुरुष कल्याणसिंह के सदृश ही उसके वंशज राठौड़ों ने अंग्रेजों द्वारा घिर जाने पर "आलणजे" दुर्ग को मजबूत किया)।

स्वामी के सेवार्थ एवं क्षात्र धर्म पालनार्थ वह वीर रतनसिंह राठौड़ अरि समूह पर प्रखर सूर्य के समान उदय हुआ और उसने मस्तक कट पड़ने पर भी हृदय के बल से आठ विपक्षियों को धराशायी किया; तथा अप्सरा का वरण कर, रथारूढ़ हो स्वर्गलोक जा पहुँचा।

इस युद्ध की सूचना पाकर कुमार सूजा (रतनसिंह के पक्ष का) अपने पूर्वज सूरतसिंह के समान ही शत्रुओं पर अन्तक स्वरूप क्रोधित हो, शस्त्र प्रहार करता हुआ, इस प्रकार टूट पड़ा मानो बिजली गिरी हो।

उस सूजा के युद्ध में प्रवेश करते ही, सेनाओं ने बादलों का रूप धारण कर लिया, जल के स्थान पर खड्गधाराओं से रक्त की वर्षा होने लगी। तथा यवन सेना पर चमकते भाले बिजली के रूप में आभासित होने लगे।

युद्ध में शक्ति प्रदर्शित करते हुए उस वीर (सूजा) ने दुष्ट यवनों को भगा दिया, जिससे उनके शरीर की गन्ध तक इस पृथ्वी पर नहीं रही। किन्तु सूजा द्वारा हजारों मीर मारे गये; जिनके रक्त मज्जादि की गन्ध आज भी तलवारों में आती है।

उस उदय (ऊदा) के पौत्र (वंशज) ने अन्य राजाओं द्वारा सुन्दर प्रशंसा प्राप्त की और अचूक दाव देने वाले शत्रुओं की कान्ति एवं उनकी स्त्रियों के चूड़े (सौभाग्य चिन्ह) एक ही साथ उतार कर अपनी युद्ध-प्रसिद्धि को अक्षय बना दिया।

राठौड़ वीर रतनसिंह

गीत- [४०]

जोड़ वाजे सेन ऊपड़े घड़ वे,
मचके कायर राव मन।
हेवर खापर गड़थळ हाथे,
रिण इसड़े रीझे रतन ॥१॥
तड़फे अरध भड़ फटे तेहड़ा,
सिंधुर घाय तूटे विसुध।
इसड़े वे छड़वै रिण अड़ियां
जोध कळोधा गिणे जुध ॥२॥
कुंजर बाज किचर फेतांणा,
त्रिनयण सकति मिलैं रिण ताम।

रुड़े दमाम नीझुड़ै रावत,
सुत माहेस वदे संग्राम ॥३॥

खळ मेंगळ तंडळ रत खळ हळ,
सार घमळ दळ वगळ सही ।
धरचे खग सांचा धूहड़िया,
न्याय काचा पतगरे नहीं ॥४॥

(रचयिता- मोहकमसिंह मेड़तिया)

अर्थ—युद्ध छिड़ने पर जब रण-वाद्य अधिक बजने लगते हैं, दोनों ओर से सेनायें जोश में आने लगती हैं, धैर्य बँधाने पर भी कायर धड़कने लगते हैं और घोड़े कट पड़ते तथा हाथियों के गण्डस्थल चूर चूर होने लगते हैं, तब रत्नसिंह का मनोरंजन होता है।

वीरों के शरीर के दो-दो तीन-तीन टुकड़े होने लगते हैं, हाथी कट कट कर बेसुध गिरने लगते हैं, दोनों ओर के शूर वीर भाला लिये हुए भिड़ पड़ते हैं। जोधा का वंशज वीरों की ऐसी भिड़त को युद्ध मानता है।

जब खड्गाघातों से हाथी-घोड़ों के टुकड़े २ हो जाते हैं, युद्ध में त्रिनेत्र (शिव) एवं शक्ति दिखाई देती है, नक्कारे (भयंकर शब्द से) बजने लगते हैं, रावत पदधारी योद्धा कट कट कर धराशायी होते हैं, तब महेशदास का पुत्र वास्तविक संग्राम मानता है।

(जब) शस्त्रों के भोंक देने पर शत्रु शरीर से तथा गज-भ्रुशुण्ड से रक्त प्रवाहित होकर कल कल ध्वनि करने लग जाता है, (तब ही) यह (रत्नसिंह) इन मार काट करने वाले वीरों को सच्चे राठौड़ वीर मानता है। अन्य कच्चे वीरों को नहीं।

रतनसिंह राठौड़

गीत- [५?]

रावत वट तणें भरोसे रतने, इम कहियो मुरधरा अणि ।
धड़ आपरो धरा छल धारां, ध्रवै नही ताय किसा धणी ॥१॥

खाफर धड़ा सिरस खीमावत, घट श्राफाले लोह घणे ।
धरती रयण जिका धणियापो, तीकां न छोड़ी खेम तणे ॥२॥
ऊदा-हरो देस री श्रागल, नीम्रहिथार बाँधियो नेत ।
खलं खुरसाण तणां मुहि खागे, खीटाविया भला रिण खेत ॥३॥
धन नीगमे धणी धूधाहर, वड रावत न गयो वदेस ।
नर नीपनों रयण नर नायक, नव सहसो रहियो तिण नेस॥४॥
धारां श्रसुर धवे राव ध्रूहड़, चंद लगे जस नांमो चाडि ।
परिभु य भमेन खमिया परिहँस, ध्रमधुर गयो दुगम खल पाड़ि॥५॥

(रचयिता- अज्ञात)

अर्थ—रावतपन के स्वाभिमानी वीर रत्नसिंह ने मरु-सेना से कहा, कि हे वीरो ! पृथ्वी के रक्षार्थ अपने शरीर को खड्ग-धार पर चढ़ा देना चाहिये। यदि जो ऐसा नहीं है, वह पृथ्वी का सच्चा स्वामी कैसे कहा जा सकता है ?

वह खेमा का पुत्र (या वंशज) खड्ग-युद्ध की श्रेष्ठ मन्त्रणा देकर विशेष शस्त्राघात करता हुआ शत्रुओं से भिड़ गया और जितनी भूमि पर स्वामित्व जमाया था, जीते जी दूसरे के अधिकार में उसे नहीं जाने दी।

उस ऊदा के वंशज (या पौत्र) ने देश के लिये अगेला स्वरूप होकर आपत्ति के समय सेना का नेतृत्व ग्रहण किया और युद्ध-भूमि में यवन-शत्रुओं को खड्ग-धार से समाप्त कर दिया।

उस बड़े राजवंशी धूधा के वंशज अदम्य वीर (रत्नसिंह) को धन्य है, जिसने (आपत्ति-समय में भी) अपना देश नहीं छोड़ा। वास्तव में वह नराधिप रत्न ही था। उसने कभी भी अपने स्वाभिमान का परित्याग नहीं किया।

इस मरुदेशीय वीर ने, खड्गधार से अदम्य यवन शत्रुओं का नाश कर अपना यश चन्द्र के समान (उज्ज्वल) बना दिया, युद्ध से विचलित न होकर अपना उपहास न होने दिया और विष्णु-लोक में निवास किया।

राठौड़ रतनसिंह

गीत–[५२]

ताह केहा खत्री पर्यंपै रतनौ,
चाह चढ़िया त्रांबियै चढै।
मन भांपियां समापै मौजां
वीरा रसि चांपियां विढै ॥१॥

सुपरा मगाह राज धर संभ्रम,
तां पुरिपां न मने तुढ़ि तांण।
उरि विढ़िया हुवै आचारी,
ओट दिया सुं आरांण ॥२॥

दल आगल खेमाळ दूसरौ,
वदै नतां खत्रवट वरियांम।
मन लाजियां थका दन मंडै,
सिर वाजियां करै संग्राम ॥३॥

कमंध फहै देयतो कलहंतो,
दलतां मडां किसी आकाहि।
गिणयां जाइ रीझै श्राणै ग्रंथ,
भिणियां जां मांटीपण मांहि ॥४॥

अण चिंतिया थारीस अतुल बल,
महि दूजौ कूंपौ कुल मौड़ ।
अवरां सिरि पड़ते जुध असमें,
रूकै भुज ओडै राठौड़॥५॥

(रचयिता- बारहठ नरहरदास)

अर्थ—दूसरे ही खेमा एवं कूंपा के समान, वीरामणी, राठौड़कुल शिरोमणि, अनुपम बलशाली रत्नसिंह, बिना याचना किये ही दान देता हुआ और दूसरों पर आई हुई युद्ध आपत्ति को बाहुबल एवं तलवार से दूर करता हुआ, स्वाभिमानी क्षत्रिय वीरों को कहता है कि—

शत्रुओं के सोत्साह चढ़ आने पर जो कम्पित होते हैं, उदास मन से दान देते हैं एवं अधिक दबाये जाने पर जिनमें वीर रस आता है—

सज्जन, सम्बन्धी और अपने स्वामी पर युद्ध-आपत्ति आने पर जो ध्यान नहीं देते, हृदय में भय को स्थान देते हैं (डरा करते हैं) एवं जो ओट में रहकर शत्रु को नष्ट करना चाहते हैं—

संकोच से दान एवं अपने पर आ बीतने पर जो युद्ध करते हैं—

कवियों को दान में तथा वीरों को युद्धार्थ पृथ्वी देने में जो हिचकते हैं, रचित ग्रन्थों पर गिन २ कर मुद्रायें देते हैं और युद्ध छिड़ जाने पर ही जो लड़ना चाहते हैं वे व्यक्ति किस प्रकार क्षत्रिय माने जा सकते हैं?

राठौड़ रत्नसिंह

गीत- [४३]

गिरे सूर रण छाक वज हाक टोली गणा,
मकारे सगत दोली जयत मांण ।
रता खग झकोली सीस टूटां रतन,
उतोली लगी दोली जसी आंण ॥१॥

गैहरी वीर चौसठ खड़ी गेहरण,
नेहरण डाक गावे लिया नेम,
कलाई भली करमाल् विन सर कमंध,
जलाई भाल् ढंडा लपट जेम ॥२॥

जुड़त भुजडंड वन यंड देवल ज्युं ही,
वगर सर हुवां भुजडंड सोहड़ वेग।
धूमा हेमकसप मल् जसी ब्रह्म पेड़ मर,
तीम इग परां जाती वही तेग ॥३॥

सीस गोना मही रवण होलीसनड,
तमासागीर रण छके ता ठौड़।
दलां अँगरेज ईडर धरा दाखियो,
रंग है घणा रतनेस राठौड़ ॥४॥

(रचयिता- अज्ञात)

अर्थ—जिस समय सैन्य समूह में रत्नसिंह की हुँकार होने लगी, तब युद्ध में घावों से छके वीर धराशायी होने लगे। यह देख कर (रणक्षेत्र के) आसपास चक्कर लगाती हुई देवी जय २ कार करने लगी। उस समय मस्तक के कट जाने पर भी वीर रत्नसिंह ने प्रज्ज्वलित होली की ज्वाला के समान रक्त-रञ्जित तलवार उठाई।

बावन ही वीर एवं समस्त चौंसठ योगिनियां उस कमंध के चारों ओर इकट्ठे होकर होली के गेहर खेल खेलने वाले स्त्री पुरुष बन गये और उसी वीर का प्रेमगान गाने लगे। वीर के उस रुण्ड ने मस्तक के न होते हुए भी ढूँढा राक्षसिनी द्वारा जलाई गई ज्वाला (होली) के तुल्य अपनी तलवार हाथों में उठाई

बिना मस्तक के उस वीर की भुजायें इस प्रकार चल रही थीं, जैसे बिना शिखर वाले देवालय की ध्वजायें फहरा रही हों। बीस कदम बढ़ कर उसने दुश्मनों पर तलवार इस प्रकार चलाई, मानो हिरण्यकशिपु की बहन को जलाते समय रोहित वृक्ष पर आग जलाई गई हो।

(इस प्रकार) राठौड़ वीर रत्नसिंह ने अपने सगोत्रीय बन्धुओं के भू भाग की सीमा में सजग होकर होलिकोत्सव के समान युद्ध किया। उस खेल के दर्शक जितने भी दुश्मन थे, वे सब घावों से छक गये। यह सब देख कर अंग्रेजों की सेना ने तथा ईडर भू-भाग के निवासियों ने उस वीर की प्रशंसा की।

राठौड़ वीर गजसिंह

गीत–[५४]

इळा अतुल आतम-सकति ऊजळा आचरण,
सोहियौ दीह खत्रवाट साजौ।
पाट रौ भगत कुलवाट रौ परिग रण,
रिणमिले रूप राठौड़ राजौ ॥१॥

हाथ रौ पाथ हैथाट रौ हेड़वण,
खळां रौ खेंग रण खत्रिये खेत।
धरा रौ थंभ जस मार रौ धूरि धमळ,
वंस रौ तिलक खेमाळ रौ वेत ॥२॥

काजि गज बंध रै अधणि आतम किये,
धू धड़े लिये मुह रावतां धौंड़।
मांण रो दुओवण अणी रौ मेळवण,
मौज रौ महण महिराज रौ मौड़ ॥३॥

अवाड़े वड वडे खाटिये विरद पति,

विमल संसारी जस पंडह वाजै ॥
मुरधरा अभंग मंडळीक हर मांडपण
राज घर कूँप ऋन लैम राजै ॥४॥

(रच० बारहठ नरहरदास)

अर्थ—राठौड़ वीर राजसिंह, आत्मशक्ति से पूर्ण एवं पृथ्वी पर उज्जवल चरित्र वाला है। यह वीर क्षत्रियत्व की शोभा बढ़ाता हुआ स्वयं सुशोभित होता है। राजसिंहासन का यह भक्त युद्ध समय कुल-मार्ग पर चलने वाला और साक्षात् रणमल का रूप है।

वीर खेमा का पुत्र (या वंशज) पार्थ के समान हाथों वाला, (सेना में) अश्वसमूह को बढ़ाने वाला, रण-क्षेत्र में तलवारों से शत्रुओं को काटने वाला है। (इसी प्रकार) पृथ्वी का स्तम्भ एवं यश की धुरी का धारण करने वाला धवल वृषभ भी यही है। (वास्तव में) यह अपने वंश का तिलक स्वरूप है।

यह वीर राठौड़, वीरों का सिरमोड़, अपने स्वामी के कार्य में प्राण को तुच्छ समझने वाला, सही मन्त्रणा करके रावत पदधारियों (सामन्तों) को आगे बढ़ाने वाला एवं यह अभिमान में दुर्योधन के समान तथा उमंग में सागर की तरह है। (इसके उपरान्त) सेना को जुटाने वाला और महाराज के वंशजों (या राजाओं) का सिरमोड़ (भी) यही है।

यह विरुदधारी राजसिंह महान् ख्याति प्राप्त करने वाला, एवं पृथ्वी के प्रत्येक खण्ड पर इसका निर्मल यश छाया हुआ है तथा मरुदेशीय मण्डलीक वीरों का यही अभंग वीर मण्डन (आभूषण) स्वरूप कहा जाता है। इसी प्रकार कूंपा के घर में कर्ण के समान दानवीर कहा जाने वाला भी यही वीर है।

राठौड़ राजसिंह

गीत [५५]

अरि फौजां वाज नविठा ओरे,
धन ऊधमें थर्का खत्र धोड़ ।
रेणा रूप रहांवे राजड़,
राठौड़े मोटी राठौड़ ॥१॥
खल आंगमै अवाड़ा खाटै,
दलां सनाह अखूट दति ।
कमधां भला मेवाड़े कमधज,
सांमन्त को उजलै मति ॥२॥
पिडि हेकलोइ सत्रां खल पाखर,
भुजि निरवहै बड़ा जस भार ।
जग जेठी परियां छल जागै,
जौध कलोधर जैत जुवार ॥३॥
डोहण थाट गैंगेव दूमगे,
चाइ वाडिम दाखवण मघोज ।
मोटा सहज पराक्रम मोटा
भाखै जगत कलोधर मोज ॥४॥

(रच० नरहरदास बारहट)

अर्थ—वीर राजसिंह राठौड़ों का शिरोमणि है। यह राजाओं (या रयणसिंह) के समान, शत्रु-सेना में घोड़ा तेजी से बढ़ाता है। साथ ही सोलसाह दान करता हुआ क्षत्रियत्व को उज्ज्वल करता रहता है।

श्यामलदास का वीर पुत्र (या वंशज) राठौड़, अपने वंश को अच्छा महकाता और उज्ज्वल करता हुआ सेनाका कवच रूप बन शत्रुओं से

लोहा लेना स्वीकार करता है तथा ख्याति प्राप्त कर अमित दान देता रहता है।

जोधा की कला को धारण करने वाला यह वीर राठौड़ विजयी होकर संसार में अभिवंदनीय एवं बड़ा माना गया है। यह वीर सहायता के लिये अपने पूर्वजों की तरह जाग्रत रहता है। अकेला ही यह आगे बढ़ शत्रुओं के अश्वारोही वीरों को नष्ट कर देता है और महायश-भार को अपनी भुजाओं से उठाता रहता है।

यह दूसरे ही सांगा के समान वीर, शत्रु-समूह का मन्थन करने वाला एवं (क्षत्रियोचित) उत्सव मनाने का इच्छुक महान् (उदार) कड़-लान वाला है। (इस प्रकार) यह जोध की कला को धारण करने वाला (वंशज) वीर, स्वयं महान् है और संसार भी इसके पराक्रम को महान् मानता है।

राठौड़ राजसिंह

गीत [५६]

सबे वानियँ दिली दखिण घरै गत खरै,
कलहतै पेखि जोधाण अंजम करै।
आवरे मांमिभ्रम घरे भ्रम ऊपरे,
मिंधुरां ढोहयां वाज दल साहरै ॥१॥
चापड़े चित्त अणडोल सारां चड़ै,
पाण आवाहतै ढाल नेजां पड़ै।
कियौ गरकाव छत्रबंध चढ़ियां कड़ै,
हूरु रसि वहमि गज फौज असि राजड़ै ॥२॥
ऊपड़ी थाग गंगेर त्रिद ऊधरी,
नवे दल हूंत रणताल अवरीवरी।

खँग ऊलटौ पलट खागि रमियो खरौ,
हाथियां ढाहवो तुंगि उद्दाहरौ ॥३॥
ऊभयौ पांण कजि मरण उपड़ाखियौ,
निभै लाखीक जलबोल सिरि नाखियौ।
पार ऊवार गजभार करि पांखियौ,
रिण धरणि पौढियौ सीह राताखियौ ॥४॥

(रच० बारहठ नरहरदास)

अर्थ—जिस समय दिल्ली और दक्षिणी वीरों ने अपनी भुजायें युद्धार्थ थपथपाई, उस समय राठौड़ वीर राजसिंह उत्साहित होकर अधिक स्वामि-धर्म को धारण करता हुआ अड़ गया और शत्रु की गजारोही सेना का मर्दन करने लगा।

जब वीर राजसिंह ने, प्रचण्ड वीरों के चित्त में स्थान प्राप्त कर कराघात शुरू किया, तब दुश्मनों के हाथ से ढालें एवं लोहकुंत छूटकर (नीचे) गिरने लगे। (इस प्रकार) छत्रधारी वीर ने शत्रुओं का पीछा कर गजारोही एवं अश्वारोही सेना को खड्ग के रंग में रंग दिया (खून बहा दिया)।

गांगा के उद्देश्यों को पूर्ण रूप से निभाने के लिये ऊदा के वंशज (या पौत्र) ने अपने घोड़े की रास उठाकर दुर्दमनीय सेना को, मारकाट करते हुए घमासान युद्ध छेड़कर काबू में करली। वह वीर अपना घोड़ा जहां तहां बढ़ाता हुआ खड्ग का खेल रच कर हाथियों के समूह को धराशायी करने लगा।

अपने बल पर डट कर, मरने के लिये वह वीर शत्रुओं पर झपटा और निर्भय होकर लाखों विपक्षियों के मस्तक पर चमकती हुई तलवार का आघात करता हुआ, पक्षधारी सर्प की तरह गज-सेना को पार करने लगा। इस प्रकार अपने साथियों की रक्षा करता हुआ वह अरुण-नेत्र वीर, सिंह के समान युद्ध में धराशायी होगया।

राठौड़ रामसिंह

गीत [४८]

अन ग्रवियां सार ग्रार उधमियां,
कमधज्ज राइ दिलीवै कांमि ।
रौद्रां देस धौभिया गामें,
रौद्र कटक रेहलिया गामि ॥१॥
कित अणरेह अभंग कमाउत,
जै सहजै अंजसे जोवांण ।
मिलिया द्वारि सार जाइ मारवि,
मिलिया भुगति मुगति मेळांण ॥२॥
कलि अण कलिति जैत खंभ कटकां,
अगरहरा धन तैं अधिकार ।
घांन ऊमेळ छखंड नर ग्रविया
घर रखपाळ विहंडिया धार ॥३॥
चरु सुकाल अभिनमां चौंडा,
रूक बाह दुयजा रिणमाल ।
दहुंवे करवंप तणां दमामां,
अँ जग सिरि नीघ्रनै असाल ॥४॥

(रच० नरहरदास बारहठ)

अर्थः— हे राठौड़ वीर रामसिंह ! बिना आदेश के ही तूने, दिल्लीश्वर के हित में शस्त्रधार को काम में लाकर शाही प्रांत को बचा लिया और विपक्षी यवनों को कुचल दिया।

हे कर्मसेन के अभंग पुत्र ! तेरा यश निःसीम है, जिससे सब राठौड़ों को गर्व होता है। युद्ध में जिसने तेरा साथ दिया है, उसने तो सुख का उपभोग किया और जो शस्त्र ग्रहण कर तेरे सामने डट गया, उसे मोक्ष प्राप्त हुआ।

हे अमरसिंह (उग्रसेन) के वंशज (या पौत्र) ! तू इस कलियुग में सेनाओं के बीच उन्नत एवं विजयस्तंभ के समान है। तू ने छहों खंडों के यवन जो शाह के नमक हलाल (स्वामिभक्त) थे, उन्हें धैर्य बँधाया और विपक्षी थे, उन्हें अपनी तलवार से काट दिया।

हे नूतन चौंदा ! तू प्रजा के लिये वृष्टि कर्ता यज्ञ के समान है और तलवार चलाने में दूसरा ही रणमल है। तेरे दोनों कर्त्तव्यों (स्वपक्षीय यवनों को बचाने एवं विपक्षी यवनों का नष्ट करने) के नक्कारे संसार में जोरों से बजते रहते हैं॥

राठौड़ रामसिंह *

गीत [४८]

सिंधुर चोगान विरड़ियो सबळो,
मेचक हुआ घाण भूपाल् ।
पकड़ि दांत रामे पंजाले,
पीतवांन रोपी प्रतिमाल ॥१॥
वारण वखत आवियो वहतो,
थाट चूक नर हुवे घणे ।

---

* टिप्पणी:— रामसिंह भणायवाले (अंबमेर) कर्मसेन का पुत्र चन्द्रसेन (जोधपुर) का पौत्र था। कहा जाता है, कि उसने सभा के बीच बैठे हुए शाह-जहां पर हमला करने वाले हाथी पर कटारी का प्रहार कर मार भगाया संभव है।

पूँचा सुध-सुधुंडे पाई,
　　　　　त्रिजड़ तिसोई क्रमा तणे ॥२॥
अति अवमाण गयो उवरावां,
　　　　　दांतां कमधज दूठ दुझाल ।
कुंजर तणो मार कटारी,
　　　　　मूह फेरियो अभिनमा माल ॥३॥

(रच० अज्ञात)

अर्थः— चौगान में जब एक हाथी पागल होकर (सभा की ओर) झपटा और सब (सभासद) भयभीत होकर एक दूसरे के ऊपर गिर कर कुचलने लगे, तब वीर रामसिंह ने उस हाथीके दाँत पकड़ कर उसके सुसुंड (सूंडके मूल भाग, तुंड) पर पीतवर्ण (स्वर्णिम दस्ते वाली)कटारीका वार किया

वह हाथी जब सिंहासन की ओर झपटा और बहुत से उपस्थित मनुष्य दाव चूक होगये (सुध खो बैठे), तब कामा (कर्मसेन) के पुत्र की कटार उस (हाथी) के सुसुंड में पहुँचे सहित प्रवेश करती हुई दिखाई दी।

हे उदार वीर राठौड़ ! तू नया मालदेव है । अन्य अमीर उमरावों के हाथों से (वो) राज-सेवा का अवसर जाता रहा, (परन्तु) एकमात्र तू ही यहां डटा रहा और हाथी के दांत पकड़ कर कटार के प्रहार से मुँह फेर दिया।

राठौड़ रामसिंह
गीत [४६]

गिळिया मेंगळां देसोतां गहीया,
　　　　　भोजन अवर न भावे ।
मारू रांम कटारी मोटी,

म्याय पडियार न मावे ॥१॥

कुंजर मद छाकची कमावत,
छत्रपत रुधर छलाई ।
प्रतिमाळी पई वार न पैसे
मोटे मांस मचाई ॥२॥

ग्रास गयंद नरंदा ग्रासे,
वोहो लोहियां वयाळी ।
खांपां न ममावे खेड़ेचा,
जाड़ी हुई जड़ाली ॥३॥

कुम्भ मथती चंद–कळोधर,
पिसणा रुधर पियती ।
त्रिपती हुये देय जस तोने,
भुज थारे भगवंती ॥४॥

(रच० अज्ञात)

अर्थः— हे मरुदेशीय वीर रामसिंह ! तेरी कटारी ने कई हाथियों एवं देशाधिपों को खा डाला है । इसलिये अब इससे आहार नहीं किया जाता । तृप्त होकर यह इतनी फूल गई है, कि म्यान में भी अब नहीं समा सकती ।

हे कर्मसेन के वंशज (या पुत्र) ! तेरी कटारी हाथियों का मद पी २ कर एवं राजाओं का रुधिर पान कर छक गई है । इसीसे अब यह इतनी मांसल हो गई है, कि म्यान में यह प्रविष्ट नहीं हो पाती ।

हे खेड़ेचे (राठौड़) वीर ! बहुत से हाथियों एवं राजाओं को तेरी इस कटारी ने ग्रस लिया है, एवं उनके रक्त से तृप्त होगई है । इसीलिये

यह स्थूलकाय बन गई है। अब यह म्यान में समा नहीं सकती।

वीर चांदा (चन्द्रसेन) की कला को धारण करने वाले हे रामसिंह ! यह शक्तिरूपिणी तेरी कटारी हाथियों के कुंभस्थल का मंथन कर, दुश्मनों का खून पीकर तृप्त होगई है, जो तेरे हाथों में सुशोभित होकर तुझे यश प्राप्त कराती रहती है।

राठौड रासा (रायसिंह)

गीत [६०]

बांसा तो भोम पारकी बैठक,
सीमाड़ा ऊपरा सजोर ।
रामा तणे जांगियो रूहूतं,
जोजरो कियो दुरंग जाळोर॥१॥

दीह रात सहकोई देखे,
पुर सातश बाजतां पँड़र ।
डिये सोनगरा परहान हूवै,
राव राठोड़ तणा रणतूर ॥२॥

वीरमदरा - तणा निस वासर,
बाजे ढोल कराय त्रिभाड ।
पड़ सद तियै तिड़ै डर पिसणा,
पड़ साद्दां त्यां तिड़ै पहाड़ ॥३॥

दो मझ जिके पत्रावत दीधा,
विहुं देसां तिंव मेट तड़ ।
उर काँपिया तणा अपुराणां,
आकंपिया ढोला अनड़ ॥४॥

(रच० अज्ञात)

अर्थः— हे रासां (रायसिंह) ! तेरे भू-भाग की सीमा पर रहने वाला कोई कैसा भी सरजोर (बलवान) क्यों न हो ? तू तो उसका पीछा कर उसके भू-भाग को नष्ट कर ही देता है। (तू स्वयं ही देख, जबकि) तेरे रणवाद्य के सुनने मात्र से (सारा) जालोर दुर्ग जर्जरित होगया है।

हे राठौड़ वीर ! रात दिन तेरे बजते हुए रणवाद्य एवं तुरही के सुनते रहने से शत्रु नगर स्वर्णगिरि (जालोर) के हृदय में चोट पहुँचती है।

हे वीरम के पौत्र (या वशज) ! तेरे रणवाद्य, गिरि-शिखरों को ढहाने जैसे बजते रहते हैं, जिससे शत्रुओं के हृदय एवं पहाड़ फट जाते हैं।

हे पाबा के वंशज (या पुत्र) ! तूने अपने एवं शत्रुओं के बीच, तीन देशों (सिंध; पंजाब, काबुल) की यवन शाखाओं केलिये ढोल बजवाये, जिससे यवन एवं पहाड़ कॉप उठे।

राठौड़ विजयसिंह

गीत [६१]

मलिया सहकोय आदरे मुनसब,
चूका सांमधरम आचार।
जवनां हूंत अभनमी जैसा,
वर्जा न मलियौ जूह वड़ार ॥१॥

जाय जाय रड़माशा जोधा,
पटा लिया नम लागा पाय।
सर नांमियो नहीं सबळउत,
जोधाणै असुरांन् जाय ॥२॥

घर वाहरू चीत धू धारण,

मग सिरदार सूरमां सीम ।
तुरकां तणां करै घर तंडळ,
तुरकांनू न करै तसलीम ॥३॥
काले घर वळसी नवकोटी,
कलम अठै रहसी के काळ ।
मळिया अणमळिया मँडळीकां,
वातां उवरसी विजपाळ ॥६॥

(रच० अज्ञात)

अर्थ—स्वामि-धर्म को छोड़ कर सब, यवनों से जा मिले और 'मनसब' पद का सम्मान करने लगे (मनसब पदधारी बनगये; परन्तु सेना-यूथ-नायक विजयसिंह जो मानों दूसरा ही वीर जैसा (जयसिंह या जसवन्तसिंह) था, यवनों से कभी नहीं मिला।

रणमल एव जोधा के वंशज अन्य राठौड़ तो जागीरों की सनद प्राप्त कर यवनों से जा मिले और शाह के चरण छूने लगे; परन्तु सबल-सिंह के पुत्र मरुदेशीय वीर ने, यवनों के आगे (कभी) मस्तक नहीं झुकाया।

वह (विजयसिंह), धरा-रक्षक, स्थिर विचार वाला और राज-पूती एवं वीरता की सीमा था। उसने यवनों के रुण्डों को युद्ध में नचा २ कर छोड़े। (वास्तव में) उस वीर ने यवनों से कभी सलाम नहीं किया।

हे विजयसिंह! कुछ ही अरसे में इस मरुभूमि से यवन प्रयाण कर जायेंगे, वे हमेशा के लिये यहाँ नहीं रह पायेंगे; परन्तु जो (हिन्दू वीर) उनमें मिल गये और विरुद्ध रहे, उनकी बातें सदा बनी रहेंगी।

राठौड़ विष्णुदास

गीत [६२]

हठि मिलन कलह खर्गा मांजण खगि

माझी सघदी निभै मन ।
श्रित परि जाऊ लगै राउमारू,
विसना निरवहिया विसन ॥१॥
समहर वरण ग्रवूहण सारां,
कमधज वह ग्रवदां करण ।
परे चडिया सहज पराक्रम,
तूझ तणा जसराज तण ॥२॥
मेळण घड़ा कुमारी भारथि
कथ राखणि दाखण वरग ।
घटिया नहीं नेम घण घाए,
लांजा पूगा मरण लग ॥३॥
धन पारिस कलियाण कळोधर,
कर पेखे ग्ररि थाट कहै ।
माचा करै तो जिहिं समहरि,
विसन विरद ताइ भलां वहै ॥४॥

(रच० नरहरदास बारहठ)

अर्थ—हे विष्णुदास ! तू हठपूर्वक युद्ध में सम्मिलित होनेवाला, खड्ग से शत्रुओं को नष्ट करने वाला एवं वीरों का मुखिया तथा निडर होकर वचन पालन करने वाला था । हेमरुदेशीय वीर ! तूने जो युद्ध में मरना निश्चित किया था, उसे विष्णु ने निभाया (याद रखो) ।

हे जसराज के पुत्र वीर कमधज ! तू युद्ध पर काबू करने वाला और समस्त वीरों का विभूषण स्वरूप था । तू स्वाभाविक पराक्रम से परिपूर्ण था और उसी के अनुरूप तूने भारी युद्ध भी किया ।

हे वीर ! जिस सेना पर कभी किसी ने विजय प्राप्त नहीं की, उसे तूने युद्ध में उजाड़ दिया। (नष्ट भ्रष्ट कर दिया।) तेरी तलवार ही ख्याति बनाये रखने वाली है। (और तू भी ऐसा है जो) विशेष घाव लग जाने पर भी तूने मृत्यु पर्यन्त प्रतिज्ञा भंग नहीं की और अपनी लज्जा (इज्जत) बनाये रखी।

हे कल्याण की कला धारण करने वाले वीर ! युद्ध में तेरे हाथों को चलते देखकर शत्रु कहते हैं कि इस वीर में अधिक पुरुषार्थ है। (वास्तव में) भगवान् उसी के विरुदों को निभाता है, जो युद्ध में तेरे जैसा मस्त बना रहता है।

राठौड़ शेरसिंह

गीत। ६३]

उमँग होकवा राग रंग बहर कँमर अतर,
डमर भर ऊँच पोसाक डेरो ।
एक दन बींद होय अँजस धारे अवर,
सदाई बींद जिम झले सेरो ॥१॥
गुमर भर चढे सुखपाल ढालां गजां,
दुमल हथ पियालां पिये दारू ।
दमक जडुवार जरकसन कस दुमालां,
मुसाला झलै दनदुलह मारू ॥२॥
चुरस मड़ जनेती लार लीधा चढे,
ऊप्रवट जगत हूँ खडे़ थाडो ।
कीत-लाडी वरण दौड़ तुरंगाँ करे,
लायकाँ मोड़ राठौड़ लाडो ॥३॥
नरख छत्र उतारै लूग अवनेणियाँ,

चुरस विकवेणियाँ नेह चाळो ।
पीय दारू झले साहिजादो पनो,
अनोखो बनो सिरदार वाळो ॥४॥
(रच० अज्ञात)

अर्थ—उमंग और उत्साह के साथ राग-रंग होते रहते हैं । पोशाक से केशर, इत्र आदि की महक आती रहती है । (इस प्रकार) कोई तो एक ही दिन दूल्हा बन कर गर्व किया करता है; परन्तु शेरसिंह हमेशा दूल्हा बना रहता है ।

राठौड़ शेरसिंह, कभी तो ठाटबाट से ढाल लिये हुए सुखपाल (मियाना) और हाथी की सवारी करता है, कभी छलकते हुए चसकों से मदिरा-पान करता है और (कभी) जवाहरात और जरी के वस्त्र एवं दुशाला धारण कर चमकता हुआ दुल्हा बना रहने वाला मशाल के समान दमकता रहता है ।

रसिक सामन्तों को बराती बनाकर चढ़ाई करता हुआ, एवं (वीरता की मस्ती में) घोड़ों को राह-बेराह हाँकता हुआ वीर (शेरसिंह), कीर्ति-कामिनी का वरण करता है । (वास्तव में यह) दुल्हा रूप राठौड़, योग्य पुरुषों का सिरमौड़ है ।

सरदारसिंह का पुत्र शेरसिंह (वास्तव में) अनोखा दुल्हा है । उसकी शोभा देख मृगनयनियाँ (नजर न लग जाय इस विचार से) नमक उतारा करती हैं । यह शाहजादा छेला (बना ठना) रसीली विकवेनियों से प्रेम विनोद करने वाला एवं मदिरा पान करके झूमते रहने वाला है ।

राठौड़ शेरसिंह एवं कुशलसिंह

गीत- [६५]

धिंइग झोक जाड़ा थड़ां कहे सेरो वचन,
तोलियाँ कूंत भुज चाड़ त्रसलो ।..

घणी जोधाण बीजो घणी धार ते,
कठेरे कठेरे कठे कुशलो ॥१॥
मदाइत आवियो एम कहतो समर,
सामध्रम राज खाटण सवोलो।
गाम महराज सूँ खटक मन राखतो,
विरदपत कठेरे घणा बोलो ॥२॥
आवियो सेर सा कूंत उतालियो,
अभनमो पाल विरदाँ उजालो।
पालियो पोसियो हरामी पाट रो,
वताबाँ लाटरो हरा – वालो ॥३॥
सेर रा वचन कुशलो श्रवण साँभले,
रूक हथवाह खत्रवाट रजियाँ।
कुशल रा कूँत सूं सेर रहियो कलह,
सेर री खाग सूं कुशल सभियाँ ॥४॥
मँडे मुरधर तणी थंभ सेना मरद,
च्यार जुग नाम राखण सचेला।
मेट आवागमण चाड जल मेड़ते,
मलेगा विहूँ भारत मेला ॥५॥

(२४० अज्ञात)

अर्थ—वीर शेरसिंह घोड़ा बढ़ाता हुआ, भाला उठाये एवं त्यौंरी चढ़ाये, वीर-समूह से कहने लगा कि जोधपुर-स्वामी को स्वामी नहीं मानकर अन्य को स्वामी मानने वाला कुशलसिंह कहाँ है ? (मुझे बताइये।)

खड़ा (सरदार या शार्दूलसिंह) का पुत्र (या यशस्व), इस प्रकार कहता हुआ युद्ध में चढ़ा, कि जो (पहले) मीठी २ बातें करके स्वामि-धर्म का पालक बनता था और आज गाल फुला कर बोलने वाला एवं रामसिंह से विरुद्ध रहने वाला बनगया है वह (कुशलसिंह) सेना में कहाँ है ?

दूसरे ही पाला (व्यक्ति विशेष) तुरग एवं यशस्वी वीर शेरसिंह भाला लिये, सेना में आकर कहने लगा कि जो जोधपुरेश्वर द्वारा पाला-पोषा गया, वह हरिसिंह का पुत्र नमक हरामी नाटे कदवाला (कुशलसिंह) कहाँ है ?

इस प्रकार शेरसिंह के वचन सुन कर कुशलसिंह हाथ में तलवार लिये क्षात्र-मार्ग पर आगया और कुशलसिंह के कुंत प्रहार से शेरसिंह एवं शेरसिंह के खड्गाघात से कुशलसिंह धराशायी होगया।

चारों युगों में अपनी संचित ख्याति को बनी रखने एवं मरुधरा के स्तम्भ (आधार) पद को सार्थक करने के लिए वे दोनों पराक्रमी, वे मेड़ते के युद्ध में आवागमन मिटाकर रणभूमि से एक साथ स्वर्ग चले गये।

राठौड़ श्यामसिंह

गीत- ६५

निमा वाज धारां नपट मार पडियो नरां,
धड़ा होय वेहड़ा नगारा धीह।
अनड़ घड़हड़ हुई माण दूजा अगर,
स्यामड़ा जाग नींदालुवा सीह ॥१॥
पछट भट उडे मझराति लोहां प्रगट,
घड़ मड़े सीस धड़ नाचिया वाढ।
दुरंग वाले सिखर-सिखर लागी दमँग,
गहक चढि ऊठ नाहर घणे गाढ ॥२॥

विकट थट लूंब निम जोध चहुँगे बलों,
बाज आंबाट अवसाण बारू।
मूरज मुरजां हुयो सोर वाली ममख,
मर्यंद टीकीनला उठ मारू ॥३॥

आम लागो सुखे पहाड़ल उठियो,
मछर भर घणो मुरधर तणो मोड़।
पचाहर पाड़ गढ़ राड़ लड़ पाधरे,
रूक खळ भाड़ गयो राठोड़ ॥४॥

(रचयिता- अज्ञात)

अर्थ—हे त्रिदिव सिंह के समान श्यामसिंह ! इस रात्रि में तलवारें टकराकर बज रही हैं, वीरों पर आपत्ति आगई है, रुण्डों के दो-दो टूक होरहे हैं और (वीर हुंकार एवं शस्त्रों की खनखनाहट से) पहाड़ प्रतिध्वनित होगये हैं। इसलिये हे सूर्य-समान दूसरे ही अगरसिंह ! अब तू सावधान होजा।

विशेष आहार के नशे में छके हुए सिंह के समान हे श्यामसिंह ! इधर तो आधीरात है और फिर ऐसे समय (वीरों को) धराशायी कर देने वाली शस्त्र की वर्षा होरही है। कटे हुए मुण्ड धड़-धड़ ध्वनि कर रहे हैं, रुण्ड नाच रहे हैं, जिस पहाड़ पर तेरा दुर्ग है, उसकी प्रत्येक चोटी पर आग सुलग उठी है। इसलिए दृढ़ता से उठ बैठ।

रात्रि में, समूह बद्ध होकर वीर लड़ने के लिए चारों ओर से (युद्ध क्षेत्र में) उतर पड़े हैं और सावधान करने के लिये रण वाद्य बज रहे हैं। (देख तो) दुर्ग की प्रत्येक बुर्ज पर (तोपों से) बारूद की ज्वाला सुलग रही है। इसलिये हे मरुदेशीय चितकबरे (केशरी) शेर ! अब तू उठ खड़ा हो।

संकर दीठी कहो किनां कानां सुणी,
जिरा सिर रंभा तन केम जूवा ।
आदि लग सरग भेळा नितो आवता
हमरके बैह डुक केम हूवा ॥३॥

पालहर लड़े उतवंग पड़ियां पछे,
सत्रां किरमाळ रणताळ सांसे ।
आभरण करे मन अंजस धरि आवियो,
वरण कजि रही सुजि तरण वासे ॥४॥

नीलकंठ - एवही बात मानूं नहीं,
कमळ पडियां लड़े केर काया ।
पोहोर हिक विसन सिभू कथां पेखतां,
एतलो रँभा (ले) हूळ आया ॥५॥

अकुट सिव मोज रिग पोढियो महाभड़,
रिमा रहचण इती वार रहियो ।
थाप वैकूंठ दरवार मिलीयो विचे,
कमँघ सुरलोक सवाम की हयो ॥६॥

(रच० अज्ञात)

अर्थ—भगवान विष्णु ने शिव से प्रश्न किया, कि—न तो मेरे अश से प्रकट कोई वीर ही (मृत्युलोक से) यहाँ आया हुआ दिखाई देता है और न अप्सरायें ही हैं, जिनके साथ कोई रथारूढ हो, फिर यह आपके हाथ में किसका मस्तक है ?

उत्तर देते हुए शिव ने कहा—यादवों और राठौड़ों ने इस समय जो भयानक युद्ध छेड़ा है, उसमें नरपाल नामक वीर के साथ सरदारसिंह

का पुत्र जूझ पड़ा, जिसका मस्तक तो कट पड़ा (जो मेरे हाथ में है) और धड़ कट पड़ने के लिए अभी भी झगड़ रहा है।

विष्णु ने कहा—हे शिव ! यह बात जो तुम कह रहे हो, कानों से सुनी है अथवा आँखों से देखी है ? जीव, मस्तक, अप्सरा एवं वीर का शरीर (चारों) अलग २ नहीं रहते। ये सब शुरू से ही एक साथ स्वर्ग में आते रहते हैं। (बड़ा आश्चर्य है कि) अबकी बार ये टुकड़े २ कैसे होगये ?

शिव ने कहा—पाता के पौत्र (या वंशज) का मुण्ड, जब लड़ते-लड़ते कट गया, तब रुण्ड ने भयानक खड्ग-युद्ध छेड़ कर शत्रुओं को कष्ट पहुँचाना शुरू किया। यह देख कर अप्सरायें प्रसन्न होती हुईं शृङ्गार कर उसे वरण करने के लिये रणस्थल में ही ठहर गई हैं।

विष्णु ने कहा—हे शिव ! इस बात को मैं नहीं मानता मुण्ड के गिर जाने पर रुण्ड किस तरह लड़ सकता है ? (यह बात समझ में नहीं आती)। इस प्रकार एक पहर तक विष्णु एवं शिव का वाद विवाद होता रहा। इतने में रम्भा आदि अप्सरायें विमान में बिठाकर उस वीर को लेती आईं।

इस प्रकार उस वीर-मस्तक ने शिव को प्रसन्न किया और धड़ रणस्थल में सोगया। तदनन्तर उस वीर राठौड़ को वैकुण्ठ में प्रभु की सभा में जगह मिली। वहाँ सब देवताओं ने उसे धन्यवाद दिया।

महाराजा सामंतसिंह राठौड़ (किशनगढ़)

गीत—[६८]

माहाराज धन करण कारज मुगतो माग रो,
तजे मन दगत मद लोभ तरखा।
कमँध उप्रभाग रा जगत वरला केयक,
सांवता हर-भगत आप सरखा ॥१॥
जनक प्रहलाद अक्रूर ऊधव ज्युंही,
नृपत जुजठल ज्युंही हरी नेहा।

नजर नजदीक सरदार दीठा नको,
जोध भजनीक अल् तूझ जेहा ॥२॥

सत भरत संत अवलंब असरण सरण,
धनो पंकज – चरण चीत धारू ।
वसन रा आप जूं कसा खत्रिया वरण,
राम समरण करण वारमारू ॥३॥

कुलां उजवाल् नत पांन अम्रत करण,
ग्यान द्रढ भागवत सुणे गीता ।
आप ज्यूं हरचरण धार राखै अवस,
जके सरदार जमवार जीता ॥४॥

(रचयिता– 'देवा')

अर्थ—हे राठौड़ महाराजा सामन्तसिंह ! आपको मोक्ष मार्ग प्राप्त कराने वाले कर्मों को धन्य है। आपने, मन को जलाने वाले मद, लोभ और तृष्णा को छोड़ दिया है। संसार में आपके सदृश विरला ही कोई ईश्वर भक्त होगा।

हे वीर ! ईश्वर के प्रति आपका स्नेह, जनक, प्रह्लाद, अक्रूर, उद्धव एवं युधिष्ठिर के समान है। आप जैसा ईश्वर का जप करने वाला हमने अपनी नजर से नहीं देखा।

हे राठौड़ राजा ! सत्य का पालन करने वाला, सन्तों का आश्रय-दाता, शरणों को शरण देने वाला एवं प्रभु पद्-पंकज में चित्त लगाने वाला तथा विष्णु के अंश से उत्पन्न राम के नाम का स्मरण करने वाला आप जैसा कोई भी दूसरा क्षत्रिय नहीं है।

अपने वंश को पालन करने वाले, ध्यानपूर्वक भागवत, एवं गीता के श्रवण द्वारा अमृतपान करने वाले, आप जैसे अन्य कौन हैं ? यदि आपकी

बरह ईश्वर के चरणों में प्रेम रखे, तो वह क्षत्रिय अवश्य अपने जीवन को सार्थक बना सकता है।

महाराजा सूजा (संभवतः जोधपुर नरेश सूरसिंह)

गीत- [६६]

मिलि सेन मंडोवर असुर गहणि मचि,
चढ़े वडा रिणि असुर वहि।
सूजे चढ़ा घातियाँ साकुर,
कमधज्ज राह माते कळहि ॥१॥

खेड़ेचे खाळु खै काते खाइ,
खत्री करमाळ सम्हे भुजि खाँग।
रिम दळ सरिस अभिनमें रिणमल,
वोरवि अति मेळियी अवाग ॥२॥

जगि अणभंग सुपह जोधपुरै,
घण दळ फुरळि मचंते घाइ।
पाखां करे पवँग पिड़ संगमि,
रिम धड़ सीसि ओरियाँ राइ ॥३॥

जैत जुवा(सगह जाधाउति,
दुयणा सिरि वाळे खग दाट।
सूजै राइ भूझै (यूं) समहरि
विढ़ि अरि थाट किया दळ वाट ॥४॥

(रच० नरहरदास बारहठ)

अर्थ—मंडोवर पर जब यवन-सेना ने आकर घेरा डाल दिया और महायुद्ध छेड़ दिया, तब युद्ध के मतवाले राठौड़-राज सूजा—(सम्भवतः सूरा) ने सेना में अपना घोड़ा बढ़ाया।

नये रणमल के समान राठौड़ क्षत्रिय ने अपने हाथों से तलवार उठाकर शत्रुओं को काट कर ढेर लगा दिया। साथ ही शत्रु (यवनों) के साथ जो सम्बन्ध जुड़ा हुआ था, उसे भी नष्ट कर दिया।

शक्तिशाली वीर जोधपुर – स्वामी ने युद्ध के लिये जाग्रत (उत्तेजित) होकर शस्त्राघातों से जहाँ तहाँ शत्रुओं को घायल कर दिया। लड़ते समय बढ़ता हुआ उसका घोड़ा पंखधारी के समान दिखाई देने लगा।

उस जोधा के वंशज वीर सूजा ने खड्ग द्वारा शत्रुओं को दबाते हुए युद्ध आरम्भ कर दिया और आगे बढ़कर शत्रु-समूह को नष्ट करते हुए विपक्षी सेना को भगा दिया। इस प्रकार विजय पाने पर उसके साथियों ने उसका अभिवादन किया।

जेतमालोत सूजा (सूरजमल) राठौड़

गीत [७०]

सह हिंदू तुरक सहल गिण सूजा,
अकबर द्वार वडा ओगाढ़।
रावळ (उग्र) सुछलि ते रोपी,
दोखा मांन हिये जम दाढ़ ॥१॥

जेत तणा पह काम जागिया,
अवर सहल उवरा और।
कूँपळि किया कटारी कूंपल,
मोर फूटवी फूटा मोर ॥२॥

पे परदेस आंगमे प्रिसण,
अगर सुछल करि सक्षर अती।
अभँग जढ़ी चहुआण तणे उरि,
मोगलियालिय ऊब मती ॥३॥

जेताहरा संसार जाणियो,
मान तुहाले हाथ मुओ।
हे वे लख आंगमते हिंदू,
हिन्दू जस फल सफल हुओ ॥४॥

(रचयिता- अज्ञात)

अर्थ—हे वीर सूजा! अकबर के यहाँ रहने वाले जितने दृढ़ वीर हिन्दू एवं मुसलमान थे, उन्हें तू ने सामान्य समझा और रावल उग्रसेन (बाँसवाड़ा) की भलाई के लिये उसके अपराधी मानसिंह की छाती में कटार भोंक दी।

हे जेतमालोत (क्षत्रिय)! सब राजा और अन्य साधारण उमराव आदि तेरे इस कार्य को जान गये हैं, कि—तेरी कटारी (मानसिंह की) नाभी में लग कर पल्लवित हुई एवं पीठ के पार होकर मंजरी युक्त होगई।

हे उग्रसेन के सहायक वीर! तूने विदेश में (दिल्ली में) रहते हुए शत्रु से भी लोहा लेना स्वीकार किया और छल-कपट से चौहान (मानसिंह) की छाती में अचूक कटारी भोंक दी।

हे जेता के वंशज (जेतमालोत) हिन्दू वीर (सूजा)? संसार यह (अच्छी तरह) समझ गया है कि मानसिंह की मृत्यु तेरे द्वारा हुई। (अब) तेरा यश परिपक्व होगया है (कीर्ति सर्वत्र छागई है, जो कभी नहीं मिटने की)। तेरी तरह जो (वीर), लाखों शत्रुओं को परखता है, वास्तव में वही हिन्दू वीर है।

राठौड़ हठीसिंह (जोगीदासोत)

गीत [७१]

हूरां कहै तुरक अछर कह-हिंदू,
विढ़ण काज दोय वरग विढे ।
हठीसिंघ ऊपर लागो हठ,
चोकस होव 'न' रथां चढै ॥१॥

लोठी लगी कोसि नहँ लेसी,
दाखे हूरां अछर दिसी ।
माथे सिखा न कानां मोती
कहो कमळ विण खबर किमी ॥२॥

हीया फूट, हट म करो हूरां,
नर हींदू छे तुरक नहीं ।
वामीवंध केसरिये वागे,
घर सोहोड़ राठोड़ सही ॥३॥

कमळ यते आणियो कपाळी,
पांवड़ो साठ पचास परां ।
हूरां सोच छोड़ कर हाथां,
यारे अपछर लूण उरां ॥४॥

जुध वारंगना वरे जोगउत,
विहड़ घड़ा यदपुर वासियों ।
मह जोधां सळखां रिणमलां,
कमँध कुटँब ऊजळो कियो ॥५॥

(रच० अज्ञात)

अर्थ—जब युद्ध में हिन्दू और यवन वीर दोनों कट गये, तब हठी-सिंह का वरण करने के लिये हूर, उसे तुरक और अप्सरायें हिन्दू वीर कह कर झगड़ने लगीं। इस प्रकार निश्चय नहीं होने तक कोई भी उसे रथारूढ़ न कर सकी।

हूर, अप्सरा से कहने लगी, कि क्या तू मुझ से बलिष्ठ है ? इसे (हठीसिंह को) जबर्दस्ती पीछे पड़ कर छीन लेगी ? जब इस वीर का मस्तक ही गायब है, तब शिखा और कान में मोती होने का केवल अनुमान लगाकर किस प्रकार इसे हिन्दू वीर मान रही है ?

अप्सरा ने हूर से कहा,—तू अन्ध हृदय होकर वृथा हठ कर रही है। यह अवश्य हिन्दू वीर है। देख—पगड़ी के बाँये पेंच रखने वाला यह राठौड़ वीर है। इसका जामा केशरिया है।

इतने में यह झगड़ा मिटाने के लिये शिव ने पचास साठ कदम की दूरी पर उस वीर के पड़े हुए मस्तक को लाकर दिखाया, जिससे वह वीर हिन्दू साबित हुआ। हूर ने जब यह देखा तो उसने मृत वीर का हाथ छोड़ दिया और अप्सराने (वीर को नजर नहीं लग जाय, इस उद्देश्य से) उस पर नमक वार कर अंक से लगा लिया।

इस प्रकार उस जोगावत (जोगीदासोत हठीसिंह) का वरण अप्सरा ने किया और वह वीर अपने शव को यहीं छोड़ अप्सरा सहित इन्द्रपुरी को चला गया। उस वीर ने अपने पूर्वज जोधा, सलखा और रणमल के राठौड़ वंश को पवित्र सिद्ध कर दिया।

राठौड़ हरिसिंह

गीत [७८]

कुळवाट चीत अगजीत, कनौजां,
थरि लागां वेळां अफारि।
मांमहि खग सुजड़ी वनसहसै,
हाँतळिया वाहिया हरि ॥१

खिति खत्रमाग लाग खेड़ेचा,
पड़िये सिर धाए भिसण ।
विषमी धार सार वाढाळी
तूंग न भूलौ जैतवण ॥२॥

असहां रूक सीसि आफळतां,
उरि चढ़िया असमांण उमारि ।
ऊदाहरे सुजड़ अणियाळी,
पार हुवै पूजविया पारि ॥३॥

घड़ त्रूटै साचविया ध्रूहड़,
आउध तां साखी अरण ।
कलहणि साखि दाखि मोटा कुळ
मिळि सूरा कीधो मरण ॥४॥

(रच० नरहरदास बारहठ)

अर्थः— हे राठौड़ वीर हरिसिंह ! तू ने अपने कन्नोज राजवंश की, सदा विजयी होते रहने वाली रीति का चिन्तन कर शत्रुओं द्वारा घिर जाने पर भी उन्मत्त होकर सावधानी से तलवार चलाई । तत्पश्चात् (घायल होने पर) हाथों का प्रहार किया ।

हे जैतसिंह के पुत्र (या वंशज) वीर खेड़ेचे राठौड़ ! क्षात्र-पथ पर कदम देकर मस्तक कटने पर भी शत्रुओं को नष्ट करने लगा और विषम (आपत्ति जनक) समय आजाने पर भी खड्गादि शस्त्रों के अतिरिक्त कटार को नहीं भूला (अर्थात् अन्त में कटार पकड़ी ।)

हे ऊदा के वंशज ! युद्ध में भिड़ते समय तू ने शत्रुओं के मस्तक पर खड्गापात किये; परन्तु जब दुश्मन नजदीक आ पहुँचे, तब (तू ने)

ऐसे विषम ढंग से कटार चलाई कि वह शत्रुकाया को पार करती हुई शत्रुओं को भी संसार के पार कर दिया।

हे वीर! शरीर के टुकड़े २ होजाने पर भी तूने हाथ से शस्त्र नहीं छोड़ा, इस बात का साक्षी सूर्य है। कलह कर्त्ता (दुश्मन) भी इस प्रकार तेरी मृत्यु को देख कर तेरे उच्च कुल के होने की साक्षी देते हैं।

राठौड़ वीर हिंगोल

गीत (७३)

वडौ भींच राणां तणी धरा आडौ वसै,
राऊ राठोड़ पाखर रवद रोळ।
फोज अकबर तणी जिती आवै फरे,
ग्रहै तेता सरिस खड्ग हींगोळ ॥१॥

पाधरै दैसि राठोड़ वांकौ पुरुष,
वसै सुरताण राणा विचाळे।
विचित्र लोहे वसुह वीत वाळै वळै,
विदै ताड़ वीत हींगोळ वाळै ॥२॥

अखाउत आड वाहर चढ़े आपड़े,
सांमि रै काम ससनेह समराथ।
छड़े कूंते मड़ा गउत्री छोड़वै,
भाद - हर आभरण करै भाराथ ॥३॥

(रच० अज्ञात)

अर्थः—राठौड़ राजवंशीय महान् वीर हिंगोल, राणा के भू-भाग का तेजा (रक्षक) स्वरूप तथा यवनों की अश्वारोही सेना में दल चल

मचा देने वाला था। बादशाह अकबर की सेना जितनी भी आती उसी के सामने वह वीर खड्ग ग्रहण कर (डट जाता और) उसे भगा देता।

राठौड़ हिंगोल समतल धरा के होते हुए भी बांका वीर था, जो बादशाह एवं महाराणा के युद्धों में (राणा का पक्ष लेकर) विचरण करने वाला था। पृथ्वी का उपभोग वह विचित्र ढंग से करता था। वह वीर गोरक्षक था, (यदि) जो गोधन को नष्ट करना चाहता उसका वह वित्त लूट लेता था।

भाखा का पुत्र वीर (हिंगोल) भादा के वंशजों का विभूषण एवं स्वामी का प्रेमी, स्वामी के कार्य के लिये सामर्थ्यवान एवं अर्गला स्वरूप था। वह राणा का पक्ष लेते हुए शत्रुओं को पकड़ने वाला था। विपक्षी वीरों पर कुंत – प्रहार करके गायों को छुड़ाने वाला एवं उन गोहरण करने वालों से युद्ध करने वाला था।

महाराजा वखतसिंह १ (जोधपुर)

गीत (७४

वागां नेजाळा कजाक वीर वेताळां वा हाक वाणि,
 माळा चाड वागां डाक डमरू महेस।
हाथियां मदाळा काळा वाथियां जेसी (ह) हूंता,
 वांघी चाळा निराताळा वागो वखतेस ॥१॥

टिप्पणी:— १.- वख्तसिंह की यह लड़ाई जयपुर महाराज सवाई जयसिंह के साथ वि. सं. १७६८ में गगवाना (अजमेर) में हुई प्रारम्भ में वख्तसिंह ने अच्छी वीरता प्रदर्शित की, लेकिन अन्त में पराजित होकर युद्ध से भाग गया। अतः इस पद्य में वख्तसिंह के विजयी होने का उल्लेख अतिशयोक्ति पूर्ण है। वंश भास्कर एवं इतिहास में ऐसा ही उल्लेख मिलता है।

सोर में अजागा लूंवे घूमे काला नागां सेन,
साकुरां पनागां वागां ऊपड़े सधीर ।
खेड़पती सावळां अभागा कीधां लागां खेल,
वागा खागां मेणागां विलागां माद्दा वीर ॥२॥

कायरां रा छूटा गाढ जूवळां अफूटा क्रमे,
रथां छूटा पीतंबरां लूटा वरां रंम ।
तूटा वाढ वीजळां विछूटा वीज आभ तेम,
खूटा सीह सांकळां हूटा जेत खंभ ॥३॥

जोगणी उवके पत्र हूवके हवाई जंत्र,
लोथ छके धू धक्के लटक्के गजा लोथ ।
भूटके अवारो जोध चेढीगारो क्रोध माई,
जोधा हरो हूचके अजा रो महाजोध ॥४॥

जांगी डंडा गेह धूंसां भंडा गाडि थंडां जूडां
तेग थोड़ा भड़ां धड़ां निजोड़ां नत्रीठ ।
मालोड़ा अराबा तोड़ां आछोड़ां धमोड़ा भालां
राठोड़ां कुरम्मा वागो चोड़े धाड़े रीठ ॥५॥

आम तोळे भूडंडां विरोळे थंडां खएडा आडा,
........................ओण भू रंगेन ।
बाणा सोक वागे सत्रां धोक मागे जेण बेळा,
गजि थारे भोक लागे दूसरा गंगेव ॥६॥

खाग मे वलक्के झाट काट में विभाग खळां,
सांमळां खळक्के कुंभाथळां सूंडाडंड ।
लागा उरा हूंढाहड़ां भड़ा परा भिगे लोह,
भड़ां देख आदेस कमंधां भुजाडंड ॥७॥

छड़ाळां उपाड़ि चाडि जेसींग रा भड़ां छाती,
भूडंडा भजाड़ियो धराड़ी चएडा भाव ।
पाड़ झंडा छाकिया घूमाड़ि जाड़ा थएडा पूर,
राड़ जीतो भाड़ि खंडा धाड़ मारुराव ॥८॥

रचयिता:— महड़ू हररूप

जिस समय वीर बखतसिंह, श्याम वर्ण मदमस्त हाथी तुल्य जयसिंह [जयपुर नरेश] से जुटने के लिये सेना की पंक्ति बद्ध कर टूट पड़ा, उस समय भयंकर नेजे (भाले) चल पड़े, वीर वैताल की हुँकार होने लगी और मुण्ड माला धारण कर शिव ढाक (वाद्य विशेष) एवं डमरू बजाने लगे।

प्रज्वलित बारूद के सामने वज्रकाय वीर उमड़ने लगे, सेना में श्याम-वर्ण हाथी झूमने लगे, प्रत्यंचाओं की ध्वनि के सामने धैर्यवान वीरों ने घोड़ों की रासें उठाई, राठौड़ वीर तीन धार वाले भाले उठा कर रणक्रीड़ा करने लगे और खड्गाघात होने पर महान योद्धा आकाश को स्पर्श करने लगे।

धैर्य त्याग कर कायर साथियों को छोड़ पीछे कदम देने लगे, रथों (विमानों) को बढ़ा कर केसरिया वस्त्र धारण किये हुए युवक वीरों को रंभा (अप्सरायें) वरण करने लगी, बादलों से बिजली टूट पड़ी हो, इस प्रकार तलवारों की धार टूट पड़ने लगी और जय-स्तंभ रूपी वीर इस प्रकार बढ़ने लगे मानों शृंखलाओं से सिंह छूट (मुक्त) पड़े हों।

जिस समय अजीतसिंह का वीर पुत्र जोधा का वंशज (बखतसिंह) जो मार काट करने वाला और कराल योद्धा था वह शत्रुओं पर आघात करता हुआ जुट पड़ा, उस समय योगिनियों के खप्पर रक्त से परिपूर्ण हो छलकने लगे। बाण तथा आग्नेयास्त्र छूट कर हवा से टकराने लगे, रूण्ड कट जाने पर भी मुण्ड (मार मार) ध्वनि करने लगे और हाथियों के अंग कट कट कर लटकने लगे।

जिस समय शर - मल्लिकाएं, दग्ध तोपें एवं चमचमाते भालों की आवाज-ध्वनि होते हुए राठौड़ और कछवाहे वीर एक दूसरे के सामने हो लगातार शस्त्र प्रहार करने लगे, उस समय नक्कारचियों द्वारा नक्कारों पर लगातार डंके पड़ने लगे और समूह बद्ध सेनाओं ने युद्ध स्थल में अपने अपने झण्डे गाड़ दिये तथा घोड़े एवं वीरों के अंग तलवारों के आघातों से कट २ कर गिरने लगे।

जब दूसरे ही गांगा या गंगेव (बखतसिंह) का प्रशंसनीय भाला चल पड़ा, तब वीरों ने आकाश को भुजाओं पर उठा लिया, और खड्गों के तिरछे वारों द्वारा सैन्य समूह का मंथन होने लगा,.................. पृथ्वी शोणित से रँगाई जाने लगी और सनसनाते हुए बाणों द्वारा शत्रु - समूह सभी समग नष्ट हो गया।

खड्ग ग्रहण किये हुए वीर शक्ति प्रदर्शन करने लगे, वे घन आघातों से विपक्षियों के शरीरों के दो २ भाग होने लगे, हाथियों के कुंभ-स्थलों पर (भालों) के आघात होने लगे और राठौड़ वीरों के शस्त्र ढूंढा-हड़े (कछवाहे) वीरों की छाती को वेध कर आर पार चमकने लगे, यह देख राठौड़ों की भुजायें वीरों द्वारा पूजी जाने लगी।

महाराजा जयसिंह (जयपुर नरेश) के वीरों की छाती पर भाले उठा कर अपनी भुजाओं का बल प्रदर्शित करते हुए राठौड़ वीरों ने रणचण्डी को प्रेम पूर्वक तृप्त कर दीया, विपक्षियों की पताकायें गिरादी तथा भारी सैन्य समूह को लौटा दिया, इस प्रकार मरु प्रदेश का स्वामी (बखतसिंह) खड्गाघात कर विजयी हुआ।

कूंपावत राठौड़ गोविंददास (खेमावत)

गीत (७४)

गिड़ रहियौ दळां भांजता गोईंद,
रेणाछळ रिणमला रह ।
कटकां तणा जैत खंभ कूपा
कूंपा सिरि आवै कळह ॥१॥

मांडण हरो सनस तिणि मंडियौ,
रेण लाज दळ रूप रखा ।
इनि जाते आए अवसाणे,
आगै हे थाहरै अखा ॥२॥

खळ खेगाल पड़े खीमाउत,
सारतणै भरि प्रथा सुध ।
मुंह रावत माथे महि राजां,
जोधा छळ निवड़े जुध ॥३॥

खग वळि ऊधरियौ खेड़चे,
धाई दाखे अधिकार घणौ ।
चौरंगि मरण चीत्र चाढाणौ
तिणि देवळि गिर मेर तणौ ॥४॥

(रचयिता अज्ञात)

हे गोविन्द दास कुंपावत ! तू बाराह स्वरूप होकर शत्रु सेना का नाशक, रिणमल के पथ का अनुसरण करने वाला, पृथ्वी का रक्षक और सेना का विजय स्तम्भ स्वरूप है। आदि से तुम्हारे मस्तक पर ही युद्ध भार आता रहा है।

हे मांडण (मांडा) के वंशज ! तू अपने पूर्वज के समान ही सुशोभित है। पृथ्वी की लज्जा एवं सेना की शोभा स्वरूप तू ही है। जब युद्ध से अन्य वीर किनारा काटने लगते हैं, ऐसे समय में तेरा ही घोड़ा सेना के अग्रभाग में दिखाई देता है।

हे सेमा के वंशज ! तेरे शस्त्राघात द्वारा शत्रु-शवों की ढेरी लग जाती है और (शक्ति का) विशुद्ध पात्र (खप्पर रक्त द्वारा) परिपूर्ण हो जाता है। जब प्रमुख रावत पदधारियों पर बड़े बड़े राजागण उमड़ पड़ते हैं तब हे योद्धाओं के रक्षक ! तू ही उस युद्ध को निबटा देता है।

हे खेड़चे (राठौड़) ! तूने क्षात्रवत को रख लिया, उस पर तेरा ही विशेष प्रमुत्व था। यह बात तेरे शरीर पर लगे हुए घाव ही बतला रहे हैं। तेरी युद्ध मृत्यु को चौगुना धन्य है। तूने युद्ध समय का वह चित्र सुमेरु पर्वत सदृश अपने स्मारक मन्दिर में स्थापित कर दिया।

राठौड़ सुजानसिंह

गीत (७६)

पालटिया कोट बालिया परहंस,
सांमलिया बाका सुरताण
" अबलां रा न लिया आभूषण
सत्र सबला साजिया सुजाण ॥१॥
अनबा नड़े काढिया आंटा,

सक केहरी तणे सिरदार।
मैहलां रा न लिया उर मंडण,
घर मण्डण नाखिया सिंघार ॥२॥
किला मेलि अह तेस काढिया,
समहर मधकर हरै सही।
हिरणाखियां तणा वर हणिया,
हार चीर लूटिया नहीं ॥३॥
गढ करिफतै मारियो गिरवरि,
दाखियो कमंध करे दरबार
अरि री बीहे किसे वासते,
भूसण न ल्यूं लिया भरतार ॥४॥
लीघा दुरंग अमल नहीं लूटी,
चौरंग गोड वहे घड चीत।
तिजड़ा पाण खाटिया त्रं ये,
वड़ा प्रवाड़ा जगत वदीत ॥५॥

(रचयिता अज्ञात)

हे सुजानसिंह ! जब सबल शत्रु मार आप वर तूने दुर्ग पर (पुनः) अधिकार कर लिया और विपक्षियों के प्राण लेलिए, किन्तु उनकी स्त्रियों के आभूषण नहीं लिए (उनके साथ अत्याचार न कर धर्म का पालन किया) तेरे इस उदार चरित्र की चर्चा शाह के कानों तक पहुँच चुकी है।

हे प्रसिद्ध युद्ध कर्ता वीर केसरीसिंह के पुत्र ! तूने अनम्र शत्रुओं को नमाकर उनसे बदला लेलिया। मह-मण्डन (घर की शोभा) स्वरूप वीरों को नष्ट कर दिये, किन्तु उनकी स्त्रियों के उर - मण्डन स्वरूप हार आदिको तूने नहीं कोसे।

हे मधुकर (माधवसिंह) के वंशज ! अहा ! तूने युद्ध करके शत्रुओं के जोश को मिटा दिया और मृगनयनी शत्रु बालाओं के पतियों को नष्ट कर दिया किन्तु इन स्त्रियों के वस्त्र-भूषण नहीं लिए।

हे राठौड़ वीर ! तेने विपक्षी गिरधरसिंह को मारकर गढ़ पर अधिकार कर लिया और सभा करके कहा–शत्रु बालायें क्यों भ्रम खाती हैं। मैंने इनके पतियों के प्राण लेलिये किन्तु इनके भूषणों पर हाथ नहीं डालूंगा।

हे उदार वीर ! इसमें तेरी चौगुनी प्रशंसा है। तूने दुर्ग में प्रवेश कर अधिकार कर लिया किन्तु दुर्ग स्थित शत्रु बालाओं को नहीं लूटा।

तेने अपनी तलवार की ताकत से संसार प्रसिद्ध तीन विरुद "खाग, त्याग, खत्रवाट" (खड्ग चलाने में दक्ष, त्याग करने वाला, और क्षत्रियत्व का पालन कर्त्ता, प्राप्त कर लिए।

राठौड़ पेमसिंह राजसिंहोत, स्थान पाली (मारवाड़)

गीत (७८)

महा घोर आरांण मचां थकां मेड़तै,
नगारां ठौड़ आलस कड़क नाल।
छांडियां पँख जुध तीन छत्र धारियां,
गाडिया पांव जुध थिये गोपाल ॥१॥

प्रबल बल भुजां कालां गजां पाड़तो,
दड़ाला भरी तन कड़ालां छेक।

हुवे रिणताल भूपाल सुर हालवां,
हालियो नहीं गोपाल – हर हेक ॥२॥

दुगम खत्रवाट रिणवाट भुज दाखवे,
रूकड़ां झाट हैं –थाट वलरीठ ।

पीठ फेरे गया नेवड़ा देसपत,
पेम निणवार फेरी नहीं पीठ ॥३॥

मार सिरदार दिखणी दलां मुदायत,
सार अणपार भुजभार सहियो ।

सामध्रम हेत दृढ नेत बंधे समर,
गजउत वाज रिण खेत रहियो ॥४॥

(रचयिता अज्ञात)

जिस समय मेड़ते के रण क्षेत्र में घमासान युद्ध छिड़ा और जोरों से नक्कारे बजने एवं आग्नेयास्त्र कड़कने लगे। उस समय छत्र धारण करने वाले तीन वीर भाग गये किन्तु एक मात्र दूसरे ही गोपालसिंह तुल्य वीर (पेमसिंह) ने युद्धार्थ दृढ़ पैर जमा दिये।

युद्धारम्भ होते ही जब तीन राजा (या राज वंशज वीर) युद्ध भूमि से पीठ बता कर चल पड़े तब अकेला गोपालसिंह का वंशज अहिग बना बना रहा और अपनी बलिष्ठ भुजाओं द्वारा श्याम वर्ण हाथियों को पछाड़ता हुआ भाले से शत्रुओं के अंगों को कवच सहित बेंधने लगा।

जब तीन २ देशाधिपति पीठ बता कर भाग गये तब एक मात्र वीर पेमसिंह ही शत्रुओं के सामने डटा रहा और अपने अश्वारोही वीरों के

बल पर लगातार खड्गाघात करने लगा। जिससे तेरी भुजाओं पर अपार क्षत्रियत्व और युद्ध – वट (पेंठ) साथ ही सुशोभित कहा जाने लगा।

उस वीर राजसिंहोत राठौड़ ने दक्षिणी सेना के प्रमुख सरदार को मार दिया और अपार शस्त्राघात भुजाओं पर सहता हुआ स्वामी धर्म पालन के उद्देश्य से सेना का दृढ़ता पूर्वक नेतृत्व करता हुआ युद्ध में टुकड़े २ होकर काम आया।

राव अमरसिंह राठौड़ (जोधपुर)

गीत (७८)

एड़े खांन ऊंधाण मुंह ताण छूटां पटां,
गाहवा दिली दरगाह – गुम रो।

आछटी कटारी साह मुंह आगले,
अरड़ियो राव जमरांण अमरो ॥१॥

वरण प्रतमाल चूगल पाड़े वचे,
लेअते खान भुज आभ लागे।

डोखियो डाण जमराण वाला देयै,
अमर जमराण सुरताण आगे ॥२॥

काल रे रूप गजसाह रे कोपिये,
दाणवां थाट आगाढ दीधा।

आपरी मीढ रा साहरी ईढ रा,
लोपियो साह उमराव लीधा ॥३॥

गाह दरगाह (ह) रि जोत मिलि गंगहर
वैरियां भाव बाहे चहाड़े ।
पातशाही तणो थंभ पाड़ीजतां,
पातसाही गयो आध पाड़े ॥९॥

(रचयिता आढ़ा मुकुन्द दास)

जिस समय राव अमरसिंह ने बादशाह के सामने ही कटारी का वार किया और अभिमान पूर्वक दिल्लीश्वर की सभा को कुचलने लगा उस समय यवन-योद्धा जबड़ा फाड़े हुए और मस्तक के बाल खुदे हुए उलटे मुंह पड़ने लगे ।

स्वयं अमरसिंह शाह के समक्ष यमतुल्य था तथा हाथी तुल्य चुगलखोर (सलावत खां) को व्याघ्र स्वरूप बन कटारी द्वारा मार कर पटक देने पर उस वीर की भुजायें आकाश को क्या स्पर्श करने लगी मानो डस जाने वाले सर्प ने (हाथी रूपी) यमराज को पूंगी चुका दी हो ।

गजसिंह का पुत्र जो काल स्वरूपी था, दानवों तुल्य यवनों को काट कर कम में गाड़ दिये और अपने तथा शाह के समान बलशाली उमरावों (प्रमुख वीरों) को शाह की परवाह न कर उसी के समक्ष नष्ट कर दिये ।

वह गांगा का वंशज शत्रुओं पर प्रहार करता और कराता हुआ शाही सभा को कुचल कर हरि की ज्योति में मिल गया । वह वीर शाही सल्तनत का स्तम्भ स्वरूप था उसे जब धराशायी किया तब वह शाह के आधे वीरों का नाश कर के ही धराशायी हुआ ।

राठौड़ रामसिंह

गीत (७६)

दूजां जोधां वरती नहँ दीसे,
वात इमें ऊपरे वडी ।
जोधाहरा राम तें जमद (ढ़)
माथे कुंजर भांति मँडी ॥१॥

कूड़ कहजे कायूं सत कहजे,
घट कोप विनी न दीसे घाव ।
गैमर सीस अभिनमा गांगा,
जड़ी जड़ाली हुवो जड़ाव ॥२॥

कमिलां अणभंग भीच कमावत,
वाढां चे गेपवी वळ ।
मही रतन सरीखा सुजड़ी,
कुंदन सरीखे गज-कमळ ॥३॥

वाही राम जगत वाखाणे,
वडे घर दाखवी विमेक ।
वारह जणा विरद बोलवे,
हाथी तणे कटारी हेक ॥४॥

(रचयिता अज्ञात

अर्थः— हे जोधा के वंशज वीर रामसिंह ! सब कोई तेरी विशेष प्रशंसा करते हुए कहते हैं अन्य वीर ऐसा नहीं कर पाये जैसा पुरुषार्थ तू ने किया। तेने कटारी का वार करके हाथी के मस्तक को विशेष सुशोभित कर दिया।

हे नूतन (गांगा) ! हाथी के मस्तक पर तेरी कटारी इस प्रकार चुभ गई जैसे नग जड़ दिया हो जिससे घाव नहीं दिखाई देने लगा इसी-लिये इस बात को कोई सत्य और कोई असत्य मानने लगे।

हे कर्मसेन के वंशज (या पुत्र) ! तू वाराह तुल्य भयंकर और अभंग वीर है। तूने कुंदन तुल्य हाथी के मस्तक पर अपने बाहुबल से कटारी क्या भोंकदी मानों रत्न जड़ दिया हो।

हे रामसिंह ! तूने हाथी पर कटारी का केवल एक ही प्रहार किया किन्तु सारा संसार तेरी प्रशंसा करने लगा और शाह के बारहों प्रमुख योद्धा जो बुद्धिमान थे वे तेरा विरद गान करने लगे।